चन्दामामा
जुलाई १९६८
75 P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS-26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

करोना के जूते पहनकर बरसात को भूल जाइये। गीली फिसलनी सड़कों की भी पर्वाह न करें। आपके करोना मानसूनी (बरसाती) जूतों के विशेष न फिसलनेवाले तले ऐसे हैं कि आपका पांव फिसलेगा नहीं। मजबूत, पानी-रोक और धोने पर नये बन जानेवाले ये जूते कई बरसातों तक चलेंगे।

सुंदर स्टाइल के विविध जूतों में से मनपसंद जूते चुनिये। बैलेरीना, वर्षाबहार, मोड्क, ताजीहवा.

भीड़-भाड़ से बचने के लिए अपनी करोना दुकान में जल्दी ही पधारिये!

**करोना जूते कम घिसते हैं— और ज्यादा समय टिकते हैं।**

# करोना साहू कं. लि.

रजि. दफ्तर: २२१, दादाभाई नौरोजी रोड, बंबई-१

CS 94 HIN

# आप के मुन्ने के लिये

## मुलायम ब्रेडोसोल मिला बिनाका बेबी पाउडर आप के बच्चे की नाजुक त्वचा को हर तकलीफ़ से बड़े प्यार से सुरक्षित रखता है

दि यूनियन बैंक ऑफ़ इन्डिया प्रस्तुत करता है :

# जाली चैक का रहस्य

सुधीर सिन्हा अपनी माँ के साथ बैंक में जाने से गर्व से फूला नहीं समाता।

सुधीर, ज़रा मेरे साथ यूनियन बैंक तक चलो। मुझे सेफ़ डिपॉज़िट वॉल्ट में अपने गहने रखना हैं।

मैं आपकी और आपके गहनों की पूरी रक्षा करूँगा माँ !

आज सुधीर पहली बार बैंक में आया है। वह हर चीज़ को बड़े ध्यान से देखता है।

मित्रवत् अधिकारी सुरक्षा की कार्यप्रणाली बताता है।

दो प्रकार से जाँच। संकेत शब्द। रक्षक ! यूनियन बैंक के सुरक्षा-उपायों से सुधीर बहुत प्रभावित है।

वॉल्ट वातानुकूलित है। दीवारों और विभाजन पट्टों में छत से लेकर फ़र्श तक लॉकर बने हुए हैं।

उसकी माँ और अधिकारी के पास अलग-अलग चाबी है। उनमें से कोई भी दूसरे के बिना ताला नहीं खोल सकता।

वॉल्ट में से आते हुए, सुधीर अपने पिता को मैनेजर के दफ़्तर में जाते हुए देखकर हैरान रह जाता है।

सिन्हा साहिब इतने परेशान क्यों है ? वह मेनेजर से क्या कह रहे हैं ?
अगले सप्ताह : रहस्य गहरा हो जाता है।

ASP/UBI-48

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
सार्थक व्यक्ति के लिए कुछ नियमों की आवश्यकता होती है। नियमों के अच्छे होने मात्र से वे स्वयं अमल नहीं होते, बल्कि अमल करने के लिए अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है। यह बात हमें "नियम का उल्लंघन" नामक बेताल कथा से विदित होती है।
"इंद्रजाल" की कहानी के लेखक विख्यात जादूगर ए. सी. सर्कार हैं। इस कहानी के आधार पर सब कोई इंद्रजाल कर सकते हैं।
वर्ष: १९ जुलाई १९६८ अंक: ११
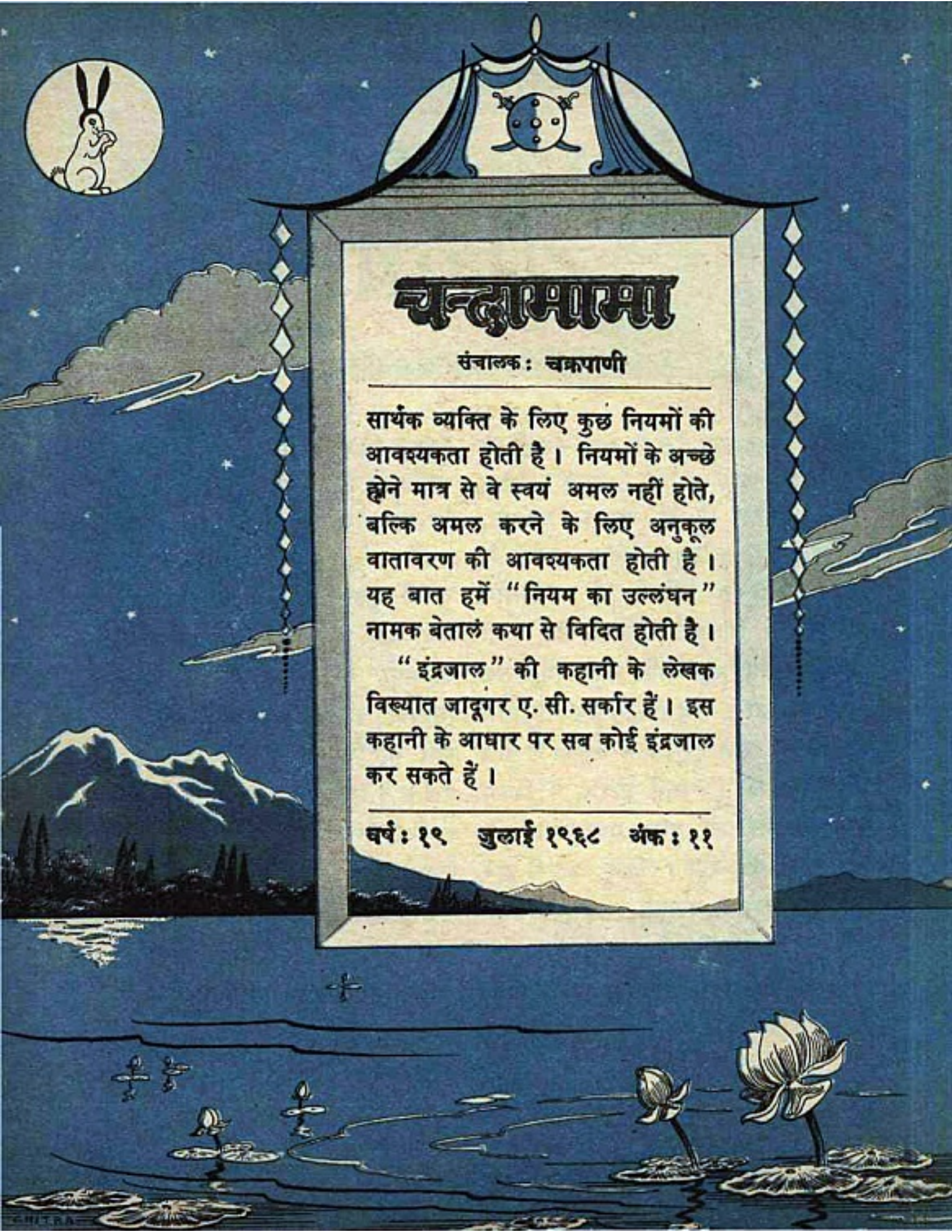
द्वितीय महाराष्ट्र युद्ध के बाद अंग्रेज़ों की ताक़त बहुत बढ़ गयी। मुगल बादशाह उनकी देखरेख में आ गया। जोधपुर, जयपुर, बूंदी, भरतपुर वगैरह राज्यों के साथ अंग्रेज़ों ने संधियाँ कीं। निज़ाम और पेशवा बिलकुल उनके अधीन में आ गये। लेकिन यह शांति बहुत दिन तक क़ायम न रही। तब तक तटस्थ रहनेवाले होलकर ने अप्रैल १८०४ में अंग्रेज़ों के साथ लड़ाई छेड़ दी। उसने प्रारंभ में विजय ही प्राप्त नहीं की, बल्कि एक सप्ताह तक दिल्ली को घेरे रहा। किन्तु उसकी हार हुई। आखिर ७ जनवरी १८०६ में उसने अंग्रेज़ों के साथ संधि की।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक महाराष्ट्र के सभी राज्य अस्त-व्यस्त थे। यहीं से महाराष्ट्रों के पतन का प्रारंभ हुआ। जसवंतराव होल्कर ने अपने भाई काशीराव और उसके पुत्र खंडेराव का वध कराया और वह खुद पागल होकर २० अक्टोबर १८११ में मर गया। उसकी रखेली तुलसी बाई ने बलराम सेठ नामक मंत्री और अमीरखाँ नामक पठान की सहायता से राज्य किया। दौलतराव सिंधिया की आर्थिक-दशा इतनी बिगड़ गयी थी कि वह अपने सैनिकों को वेतन तक न दे सका और लोगों को लूटने दिया। इसलिए सेना पर से उसका अधिकार जाता रहा। रघूजी भोंसले के राज्य में भी अराजकता फैली थी। पिण्डारी और पठान मनमाने प्रजा को लूट रहे थे।

इस हालत में भी महाराष्ट्र के शासकों ने एक बार और अंग्रेज़ों का सामना करने का संकल्प किया। द्वितीय बाजीराव का

संकल्प और भी दृढ़ था। त्रिबंकजी ने उसे प्रेरित किया। गायकवाड ने अपने मंत्री गंगाधर शास्त्री को १८१४ में पेशवा के पास दूत बनाकर भेजा। गंगाधर शास्त्री अंग्रेज़ों का पक्षपाती था। त्रिम्बक की प्रेरणा से पेशवा ने गंगाधर की हत्या करायी। अंग्रेज़ अधिकारियों ने त्रिम्बकजी को थाना के दुर्ग में क़ैद किया। शायद पेशवा की मदद से ही त्रिम्बक क़ैद से निकल भागा।

१८१७ तक हालत और बिगड़ गयी थी। अंग्रेज़ों का सामना करने के लिए पेशवा ने अन्य महाराष्ट्र के नेताओं, पठान नेता अमीरख़ाँ तथा पिण्डारियों को भी एक सूत्र में बांधने का बहुत प्रयत्न कया।

अंग्रेज़ लोग देखते चुप न रहे। उन लोगों ने जबरदस्ती विजयी बाजीराव से पूना के संधि-पत्र पर दस्तखत कराया (१३ जून १८१७)। इस समझौते के कारण पेशवा का नेतृत्व महाराष्ट्र के संघ पर से उठ गया। गायकवाड पर उसके जो अधिकार थे वे ढीले कर दिये गये, साथ ही कोंकण वग़ैरह मुख्य प्रदेश अंग्रेज़ों को सौंपने पड़े।

५ नवंबर १८१७ में दौलतराव सिंधिया से भी अंग्रेज़वालों ने ग्वालियर के संधि-पत्र पर दस्तखत कराया। इस संधि के कारण कई राजपूत राजा महाराष्ट्रों के अधिकार से मुक्त हो गये।

अंग्रेज़वालों ने जो और महत्वपूर्ण संधि की वह नागपुर की संधि है (२० मई १८१६)। द्वितीय रघूजी भोंसले २२ मार्च १८१६ को मर गया। उसका पुत्र परसोजी पागल था। परसोजी का रिश्तेदार अप्पा साहब राज-प्रतिनिधि बनने की इच्छा रखता था। अंग्रेज़ों ने नागपुर की संधि के द्वारा उसकी इच्छा की पूर्ति की।

इस तरह अंग्रेजों के हाथों में फँसना महाराष्ट्र-शासकों को पसंद न था। उनके मन में पेशवा के विचारों के प्रति सहानुभूति थी। सिंधिया ने जिस दिन अंग्रेज़ों के समझौते पर दस्तखत किया उसी दिन पेशवा ने पूना में ब्रिटिश रेसिडेन्सी का सर्वनाश किया, जलाया। २७००० सैनिकों को साथ लेकर खडकी के पास अंग्रेज़ों की २८००० सेना का सामना किया और हार गया। पेशवा की भांति नागपुर में अप्पासाहब ने अंग्रेज़ों से युद्ध किया और २७ नवंबर १८१७ में सिताबल्दी के पास हार गया। जसवंतराव का पुत्र द्वितीय मलहरराव होल्कर ने भी अंग्रेज़ों के साथ युद्ध किया, दूसरे महीने में ही महिदपुर के पास हार गया। अप्पासाहब पहले पंजाब, और बाद जोधपुर को भाग गया, १८४० में मर गया। इस तरह नर्मदा के उत्तर का सारा प्रान्त अंग्रेज़ों के हाथ में आ गया। ६ जनवरी १८१८ में होलकर ने मंदसारे के पास अंग्रेज़ों से संधि की। इस तरह इंदौर में शाश्वत रूप से ब्रिटिश का प्रतिनिधि नियुक्त हुआ।

महाराष्ट्र के राज्यों के संगठन का चिन्ह, पेशवा का पद रद्द हो गया। इसके होने के पहले द्वितीय बाजीराव अंग्रेज़ों से दो बार युद्ध करके हार गया। आखिर अंग्रेज़वालों ने उसे हर साल छे लाख रुपये देने का प्रबन्ध किया और कानपुर के पास बिठूए में भेज दिया। त्रिम्बकजी चुनार दुर्ग में मरते दम तक क़ैदी बनाकर रखा गया। सतारा नामक छोटे राज्य पर शिवाजी के वंशज प्रतापसिंह को राजा बनाया गया।

भारत में अंग्रेज़ों का शासन सर्वत्र फैल गया।

# कोलाहल पंडित

एक जमाने में दक्षिण में एक राजा था। वह बहुत बड़ा कला-पोषक था। उसके दरबार में कई कवि, पंडित, गायक वगैरह कलाकार थे।

राजा सबसे ज्यादा कोलाहल पंडित को चाहता था। राज्य-भर में उसे बड़ी आज़ादी थी। उसकी हर बात चलती थी। उसके हर काम का राजा समर्थन करता था। इसलिए उस राज्य के लोगों को राजा से जितना डर था, उतना ही डर कोलाहल पंडित से भी था। राजा का आदर-सत्कार पाकर वह लोगों को तंग करता था। लेकिन यह बात राजा को मालूम न थी।

कोलाहल पंडित को जब कभी पैसे की जरूरत होती तब नगर के किसी एक के घर चिट्ठी लिखकर अपने शिष्य के हाथ भेज देता। वे जल्दी पैसे दे देते। एक बार कोलाहल पंडित ने एक ब्राह्मण के नाम चिट्ठी लिखकर अपने शिष्य के हाथ भेजा कि वह तुरन्त एक सौ सोलह रुपये भिजवा दे।

जब वह शिष्य चिट्ठी लेकर ब्राह्मण के घर पहुँचा तब वह घर पर न था। लेकिन उसका शिष्य बाहर चबूतरे पर बैठकर वेद का अध्ययन कर रहा था। कोलाहल पंडित के शिष्य ने वह चिट्ठी उस युवक के हाथ में दी। उसको पढ़ते ही ब्राह्मण के शिष्य को बड़ा क्रोध आया। उसने चिट्ठी को टुकड़े टुकड़े करके फेंक दिया।

यह देखकर कोलाहल पंडित का शिष्य डर के मारे काँप उठा। ब्राह्मण के शिष्य ने उससे कहा—"तुम अपने गुरु से जाकर कह

बलवंतराय
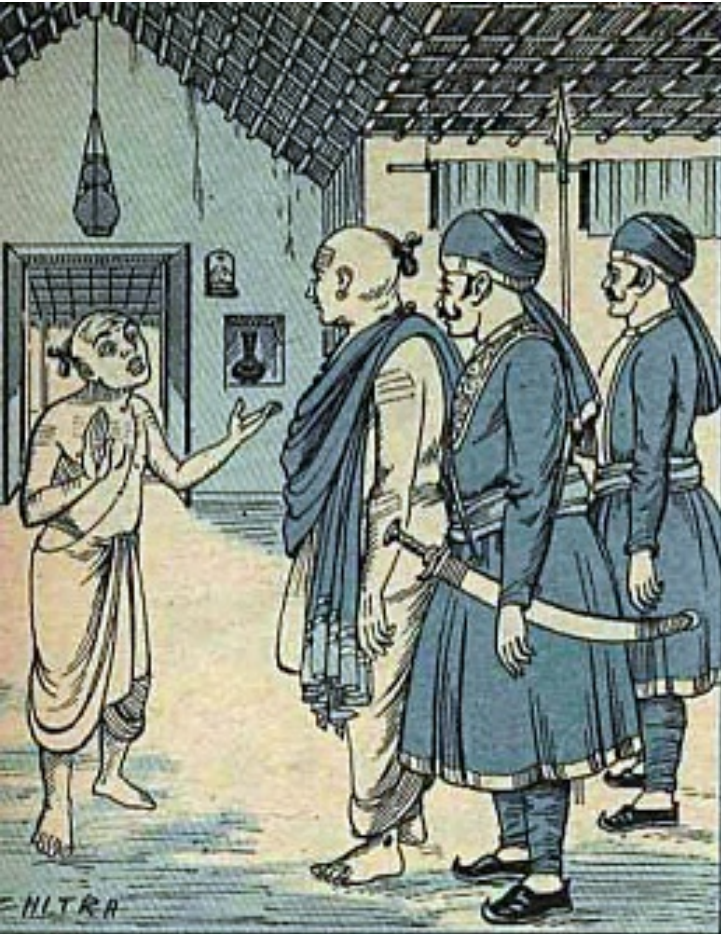
दो। ऐसी बदमाशी करेंगे तो उनकी इज्जत धूल में मिला देंगे। उसकी सेवा करनेवाले तुम्हारा चमड़ा उधेड़ देंगे।" यह कहकर वह उसको पीटने लगा।

कोलाहल पंडित का शिष्य न आव देखा न ताव। लगा दौड़ने। आखिर अपने गुरु के पास पहुँचा। साष्टांग दंडवत करके सारी कहानी सुनायी।

कोलाहल पंडित राजा का आदर पाकर घमंडी हो गया था। अपने शिष्य की बात सुनकर आग-बबूला हो उठा और राजा के पास जाकर शिकायत की। ब्राह्मण ने अपने शिष्य का अपमान किया है। राजा ने उस ब्राह्मण को ले आने का आदेश अपने सेवकों को दिया।

ब्राह्मण यह सुनकर अचरज में पड़ गया कि राजा ने उसके वास्ते क्यों सेवकों को भेजा है। जो बात उसके घर पर हुई थी वह उसे मालूम न थी। शिष्य ने उसको सारी कहानी सुनायी, गुरु से क्षमा माँगी और राजा के सेवकों से बोला—"मेरे गुरूजी का इसके साथ कोई संबंध नहीं। संबंध तो मेरा है। मुझे ले जाइये।"

वह राजा के पास गया। सारी कहानी सुनाकर बोला—"महाराज! मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने जान-बूझकर कोलाहल पंडित का अपमान किया। आप चाहे तो हमारी परीक्षा लीजिये। अगर मैं हार जाऊँ तो अपनी इच्छा के अनुसार मुझे सजा दीजिये।"

राजा को यह बात अच्छी लगी। कोलाहल पंडित ने सोचा कि उस लड़के को आसानी से हराकर राजा के द्वारा उसे खूब सजा दिलाऊँगा।

पंडितों की सभा को आज्ञा देकर राजा भीतर के कमरे में गया। वहाँ पर रानी

और राजा के बीच चर्चा चली। रानी ने कहा कि लड़का अक़लमंद मालूम होता है। परीक्षा में जीत जायेगा। राजा ने कहा कि वह नहीं जीतेगा। दोनों के बीच जो वाद चल रहा था उसे ब्राह्मण के शिष्य ने सुना।

पंडितों की सभा शुरू हुई। उस देश में पांडित्य की परीक्षा का तरीक़ा यह है कि एक के कथन का दूसरे को पूर्वपक्ष करना होगा। दूसरा व्यक्ति अपने कथन का पूर्वपक्ष नहीं कर पाता है तो सिद्धांत करनेवाले को ही अपने कथन का पूर्वपक्ष करना होगा। तब तक यह न माना जायेगा कि दूसरा व्यक्ति हार गया है और पहला जीत गया है।

"आप मेरा खंडन करेंगे? या मैं आपका खंडन करूँ?" ब्राह्मण के शिष्य ने पूछा।

लड़के का उसका खंडन करना कोलाहल पंडित को बुरा लगा। इसलिए उसने कहा-"मैं ही तुम्हारा खंडन करूँगा।"

"तब तो मेरी बातों का आप खंडन कीजिए। एक-आपकी माँ बाँझ नहीं है।
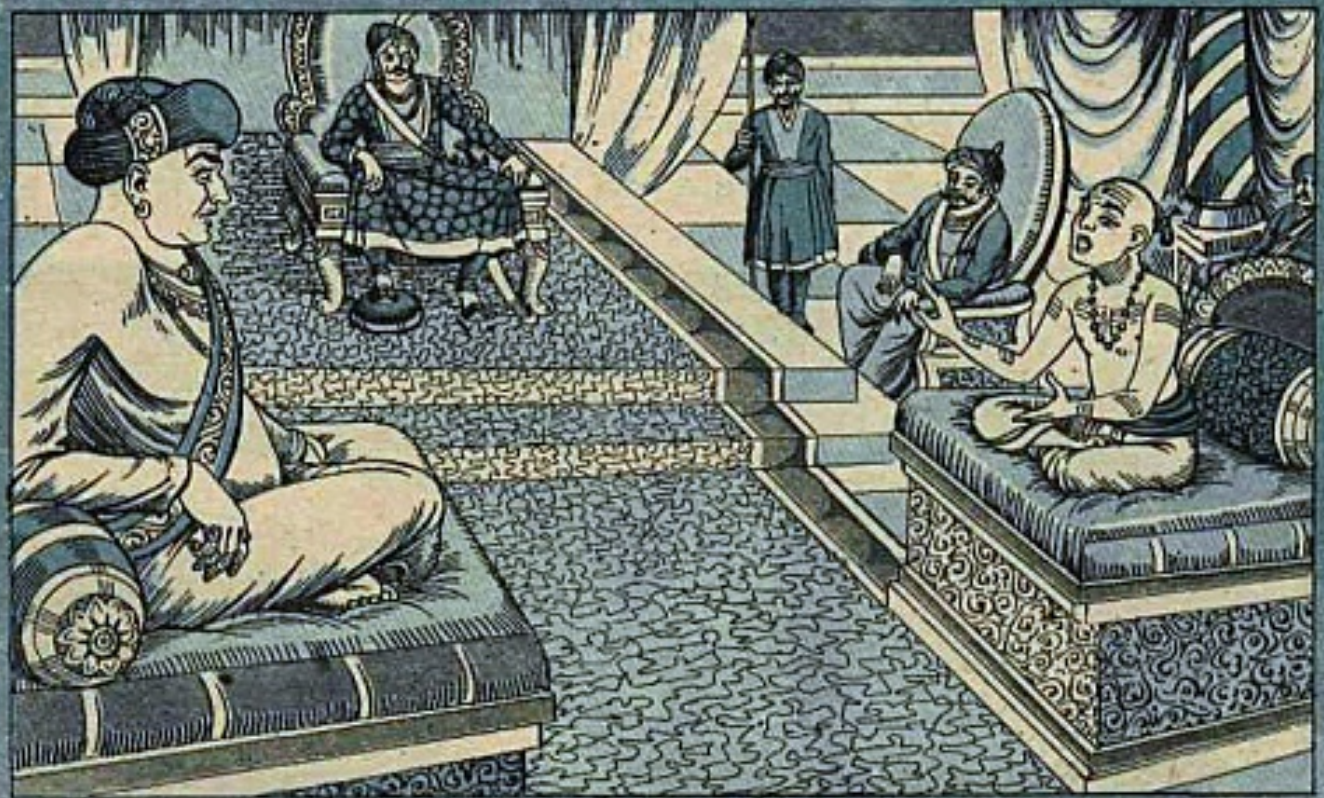
दो–राजा धर्मात्मा हैं। तीन–रानी पतिव्रता हैं।" लड़के ने कहा।

उसकी बातों का कोलाहल पंडित ही नहीं बल्कि उस सभा का कोई भी व्यक्ति खंडन नहीं कर सकता था। लड़के की ये बातें सुनते ही सभा के सभी पंडितों को उस पर गुस्सा आया। तमतमाये चेहरे से कोलाहल पंडित बोला–"तुम अपनी बातों का खुद खंडन कर जीत जाओ।"

ब्राह्मण का शिष्य बोला–"अच्छा, ऐसा ही करूँगा। पहली बात आपकी माँ बाँझ नहीं है। लेकिन एक प्रकार से वह बाँझ ही है। आप उनकी कोख से पैदा हुए। ऐसे नीच को जन्म देनेवाली कोई भी माता अपने गर्भ को सफल न मानेगी। दो–राजा धर्मात्मा हैं। लेकिन असल में नहीं हैं। क्योंकि अगर वे धर्मात्मा होते तो आप जैसे प्रजा-पीड़कों को राज्य में मनमाने करने न देते। तीन–मैंने कहा था कि रानी पतिव्रता हैं। लेकिन उन में पतिव्रता का एक लक्षण कम हो गया है। इस परीक्षा के बारे में राजा ने जब कहा कि मैं हार जाऊँगा तब रानी ने अपने पति का विरोध किया। लेकिन उनका कहना सच है। मैं जीत गया, आप हार गये।"

थोड़ी देर सभा मौन रही। लड़के की बातों पर सब चकित हो गये। आखिर राजा बड़े धर्मात्मा थे, इसलिए गद्दी से उतर आये और ब्राह्मण के शिष्य से गले लगकर बोले–"बेटा, आज तुमने मेरी आँखें खोल दीं। मुझे आज तक मालूम न था कि मेरे राज्य में प्रजा को तंग किया जा रहा है।"

इसके बाद उन्होंने ब्राह्मण के शिष्य का अच्छा सम्मान किया और कोलाहल पंडित को अपने दरबार से निकाल दिया।

# शिथिलालय

[ ६ ]

[ राक्षसी खिलौने के ख़तरे से बचकर शिखिमुखी और विक्रमकेसरी पहाड़ी गुफाओं की तरफ़ गये। तब गोबस्ती में सवर-जाति का नेता लट्ठूसिंह द्वारा अनाज लूटने की ख़बर मिली। शिखि और केसरी दोनों गोबस्ती पहुँचे। लट्ठूसिंह शिखिमुखी को देख नाराज हो गया और भाला लेकर उस पर कूद पड़ा। बाद—]

पहाड़ी प्रदेश के पास शिखिमुखी और विक्रमकेसरी से जो शबर मिला, वह तेज़ी के साथ शबर-बस्ती पहुँचा। उसने देखा—बस्ती के कई लोग रात में जलायी गयी झोंपड़ियों की मरम्मत करने में लगे हुए हैं। उनमें हर एक के चेहरे पर क्रोध और दीनता टपक रही थीं।

शबर एक झोंपड़ी के पास पहुँचा जो नये सिरे से बनायी जा रही थी। वहाँ पहुँच कर चिल्ला उठा—"शबरमाता की जय! मैं गोबस्ती का शबर हूँ। इस बस्ती का नेता शिवाल का घर कहाँ? सवर-जाति का नेता लट्ठूसिंह हमारी बस्ती में घुस आया है और सारा अनाज लूट रहा है। आपकी बस्ती से हमें मदद चाहिए।"

उसकी बातें सुनते ही झोंपड़ी बनानेवाल एक अधेड़ उम्र के आदमी ने अपने हाथ की रस्सी और बाँसों को दूर फेंक दिया

और कहा—"अरे! तुम भी कैसे आदमी हो! आफ़त की ख़बर ठंडे दिल से दे रहे हो! चलो, रात में उसी सबर-जाति क नना लट्ठूसिंह के दल के लोगों ने हमारी झोंपड़ियों को जला डाला है। हमारे नेता शिवाल का लड़का शिखिमुखी सारे जंगल में उनको छान डाल रहा है। इस बस्ती के नेता शिवाल को तुरन्त यह समाचार देना अच्छा है कि लट्ठूसिंह तुम्हारी बस्ती में है।" यह कहते वह आदमी शिवाल के घर की ओर आगे बढ़ा। उसके पीछे गोबस्ती का शबर भी चलने लगा।

जब वे दोनों शिवाल के घर के पास पहुँचे तब उन लोगों ने देखा—झोंपड़ी के सामने स्थित एक बड़े आम के पेड़ के नीच बैठकर शिवाल बस्ती के कुछ लोगों से बात कर रहा था। गोबस्ती क शबर ने शिवाल को नमस्कार किया और अपने आने का समाचार बताया। यह भी कहा कि शिखिमुखी और एक जवान भी गोबस्ती की ओर गये हैं।

शबर की बातें सुनकर शिवाल झट उठ खड़ा हुआ और बोला—"शिखी और विक्रमकेसरी गोवस्ती की ओर गये हैं। यह तो दुःसाहस की बात है। मैं लट्ठूसिंह को अच्छी तरह जानता हूँ। वह अव्वल दर्जे का बदमाश है। उसने शिथिलालय के दुष्ट पुजारी से दोस्ती कर ली है। हमें उन दोनों का सर्वनाश करना है। हमारी बस्ती के पच्चीस-तीस अच्छे जवानों को बुला लाइये।"

तुरन्त एक अधेड़ उम्र का आदमी बगल की झोंपड़ी में घुस गया, एक कंडाल लेकर बाहर आया और ज़ोर-ज़ोर से बजाने लगा। एक-दो मिनिटों में बस्ती के सभी जवान चमकनेवाले भाले लेकर

वहाँ आ पहुँचे। उनमें से पच्चीस लोगों को चुनकर शिवाल ने अलग खड़ा किया और कहा–"देखो! गोवस्ती के इस आदमी के साथ चले जाओ! रास्ते में लट्ठसिंह के दल के लोग मिलें तो उनसे जूझना नहीं। सीधे गोवस्ती में चले जाओ। मैं थोड़ी देर बाद पीछे चला आऊँगा।"

गोबस्ती का आदमी आगे-आगे जा रहा था। उसके पीछे शबर-युवक जंगल की ओर दौड़ पड़े। थोड़ी देर बाद शिवाल घर के भीतर गया, शबर-नेता को दुश्मन पर हमला करने जाते समय जो पोशाक पहननी चाहिए, उनको पहन लिया, जंगली पक्षियों के पंखोंवाला शिरस्त्राण पहनकर बाहर आया।

तब तक शबर-नेता के घर के पास बस्ती के सभी लोग पहुँच गये थे। शिवाल ने उनको चेतावनी दी–"मेरे लौटने तक तुम लोग बड़े चौकन्ने रहो। लट्ठूसिंह को अनाज चाहिए, लेकिन शिथिलालय के पुजारी को मेरे पास का ताड़पत्रोंवाला ग्रन्थ। मेरी अनुपस्थिति में वह इस घर पर हमला कर सकता है। सावधान रहो!"

"वह अद्भुत शक्तियाँ रखता है। तीसरी आँख खोलकर सब को भस्म कर सकता है।" भीड़ में से एक आदमी ने कहा।

उस बोलनेवाले को देखने की इच्छा से शिवाल ने भीड़ पर अपनी नज़र दौड़ायी। लेकिन वह दिखाई न दिया। इसपर शिवाल ज़ोर से बोल उठा–"हमारी बस्ती में कम से कम एक-दो आदमी इस पुजारी की अद्भुत शक्तियों पर विश्वास करनेवाले हैं, यह अचरज की बात है, पुजारी और उसके रुपये खानेवाले लोग जो अफ़वाहें उड़ाते हैं, उनपर यक़ीन न करें।"

इसके बाद शिवाल बस्ती के कुछ लोगों को साथ लेकर गोबस्ती की ओर रवाना हुआ। जंगल में थोड़ी दूर चलने के बाद वे एक पहाड़ी प्रदेश में पहुँचे। वहाँ पर उन्हें एक टूटा हुआ राक्षसी खिलौना दिखाई दिया। शिवाल के कुछ अनुचर उसे देख अचरज में आ गये, कुछ लोगों को डर भी लगा।

शबरों में से एक ने गिरे हुए त्रिशूल को अपने हाथ में लिया, उसपर लगे खून को ध्यान से देखा और शिवाल के पास आकर बोला—"यह त्रिशूल सौ फ़ी सदी काँसे का है। हमारे प्रदेश में कोई इस धातु का प्रयोग नहीं करता। इसमें लगा हुआ खून भी आदमी का नहीं, किसी जंगली जानवर का है।"

शिवाल ने त्रिशूल को अपने हाथ में लिया, उलट-पलटकर देखते हुए कहा—"तुम्हारा कहना सच है। मैं जवानी में जब प्रभु विक्रमकेसरी के साथ हिमालय पहाड़ों में गया था, वहाँ मैंने देखा था कि वहाँ के लोग इस काँसे की धातु से तरह-तरह की चीज़ें बनाते थे।" पल-भर सोचते मौन रहा, फिर बोला—"अच्छा, चलिये, देरी करना ठीक नहीं है।" यह कहते आगे बढा।

त्रिशूल को शिवाल के हाथ में देनेवाले शबर ने पूछा—"साहब! यह त्रिशूल आप शिथिलालय के पुजारी का मानते हैं? पुजारी हिमालय की तराइयों से ही आया हुआ है!"

"उसकी बातों पर हम कैसे यक़ीन करें? वह यह कहता-फिरता है कि हज़ार साल से वह शिथिलालय का पुजारी है, तीसरी आँख रखता है, और जब चाहे तब ग़ायब हो सकता है...इसमें कोई छल है! उसको जाल में फँसाने पर ही सच्ची बात मालूम हो सकती है। पहले हमको

जल्दी गोबस्ती पहुँचना है। हमसे पहले जो लोग वहाँ गये हैं वे अब तक पहुँच गये होंगे।" शिवाल ने कहा।

शिवाल की कल्पना ठीक थी। अपने नेता के पुत्र को खतरे में पड़ा जानकर शबर-बस्ती के युवक गोबस्ती के शबर के साथ वायुवेग से पहुँचे। बस्ती के निकट पहुँचते ही उन लोगों को शबर ने सीधे वहाँ पहुँचा दिया जहाँ पर लट्ठूसिंह अनाज लूट रहा था।

उनके वहाँ पहुँचते ही लट्ठूसिंह मूँछों पर ताव देते हुए शिखिमुखी पर कूद पड़ा। शिखिमुखी भाला ऊपर उठाकर आगे बढ़ने ही वाला था कि लट्ठूसिंह की दृष्टि अभी-अभी वहाँ पहुँचे हुए शबर लोगों पर पड़ी। वे सब हथियार उठाकर आगे कूदने को तैयार थे।

लट्ठूसिंह उनको देखते ही हठात् रुक गया और ज़ोर से बोला—"धोखा है, छल है! तुमने मुझे द्वन्द्वयुद्ध के लिए ललकारा। अब इन सब को चुपके से मुझपर उकसा रहे हो।" यह कहते उसने शबर-युवकों की ओर संकेत किया।

शिखिमुखी और उससे थोड़ी दूर पर खड़े विक्रमकेसरी ने आश्चर्य के साथ पीछे की ओर देखा। गोबस्ती का युवक शबर-बस्ती के युवकों को साथ लिये भालों के साथ आगे बढ़ते हुए उनको दिखाई दिये। शिखिमुखी ने तुरंत हाथ उठाकर उनको आगे बढ़ने से रोकते हुए कहा—"आप सब वहीं रुकिये। मैं और यह लट्ठूसिंह अपनी-अपनी ताक़त की परीक्षा करने जा रहे हैं।"
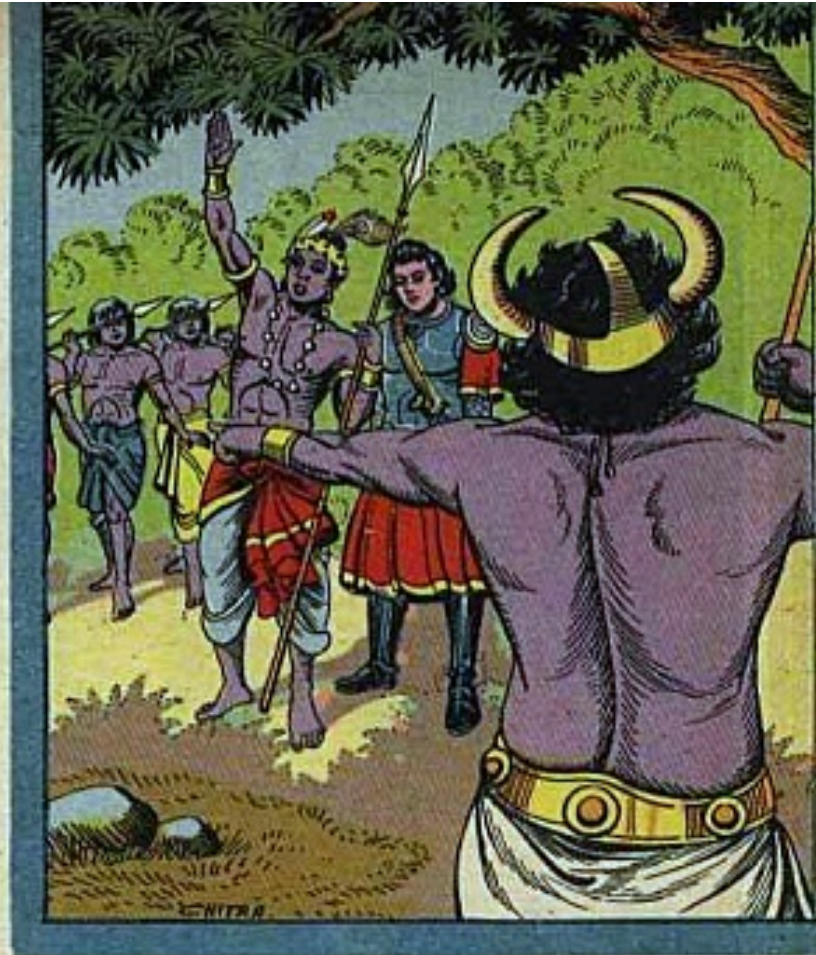
शबर-युवक शिखी की बात सुनते ही जहाँ के तहाँ रुक गये। शिखिमुखी लट्ठूसिंह को ललकारते हुए गरज उठा—"हुँ! बचा लो लट्ठूसिंह! अपनी जान बचा लो!" यह कहकर शिखी ने एक

चिल्लाया। बस्ती में इधर-उधर फैले हुए उसके अनुचर अपने नेता के पास दौड़ आये। लट्ठूसिंह ने उन सबको धानवाले गड्ढ़े जैसे गोदाम के उस पार हथियारों के साथ तैयार रहने का आदेश दिया और यह भी बताया कि शिखिमुखी के दल के लोग हिले-डुले तो उनपर तुरंत हमला करे।

इसके बाद शिखिमुखी और लट्ठूसिंह भालों को चमकाते जूझ पड़े। लट्ठूसिंह के भाले के प्रहारों को रोकते हुए शिखिमुखी ने एक-एक क़दम पीछे हटाया और धानवाले गड्ढ़े के गोदाम के चारों तरफ़ घूमने लगा। उसकी इस चाल का उद्देश्य यह था कि लट्ठूसिंह पर आख़िरी प्रहार करने के पहले उसे खूब थका दिया जाए।

शिखिमुखी का लट्ठूसिंह को गड्ढ़ेवाले गोदाम के चारों ओर घुमाना बुरा लगा। उसने सोचा था कि इस जवान शिखी को कुछ ही मिनटों में भाला चुभो-चुभोकर धानवाले गड्ढ़े में गिराकर उसपर मिट्टी डलवा देगा। परन्तु वह युवक शेर की भांति अपने भाले के वार से बचते हुए आंख-मिचौनी जैसा खेल रहा है...

क़दम आगे बढ़ाया। लेकिन इतने में लट्ठूसिंह ने एक क़दम पीछे हठाकर कहा— "तुम अपने गाँव के लोगों को रक्षा के लिए लाये हो और मुझसे लड़ना चाहते हो! अगर...अगर क्या? तुम मेरे हाथ में जरूर मर जाओगे! लेकिन उस वक़्त तुम्हारे गाँव के सभी शबर लोग मुझ अकेले पर धावा बोल उठेंगे!"

"किसके हाथ में कौन मरता है? अभी फ़ैसला हो जाएगा! गप्पे न मारो! चाहो तो तुम रक्षा के लिए अपने अनुचरों को बुला सकते हो!" शिखिमुखी ने कहा। तुरन्त लट्ठूसिंह ने तालियाँ बजाकर

"अरे कायर! डरकर भाग जानेवाले तुम. मुझसे लड़ने आये क्यों?" यह कहते लट्ठूसिंह ने दांत पीस लिया और हाँफने लगा।

"लट्ठूसिंह! मैं भाग नहीं रहा हूँ! तुम्हारी जान लेने जा रहा हूँ!" यह कहते शिखिमुखी फिर गरज उठा। उसने भालों को दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया और खींच कर लट्ठूसिंह के भाले पर वार किया। अचानक इस वार से लट्ठूसिंह का भाला टूट कर बहुत दूर जा गिरा। लट्ठूसिंह भाला लेने घूमकर दौड़ने की कोशिश में था, शिखिमुखी ने अपने भाले की नोक को लट्ठूसिंह की बाँह पर टिकाकर कहा–"लट्ठू! कहो, हार गया हूँ! मेरी शरण मांगो! जान से छोड़ दूँगा।"

"लट्ठूसिंह एक शबर से शरण माँगता है!" इन शब्दों के साथ वह फिर गरज उठा। अपनी बाँह पर टिके भाले को बाएँ हाथ से हटाकर दाएँ हाथ से कमर में खोंसी हुई छुरी निकाली और शिखी पर कूद पड़ा। शिखी ने एक क़दम पीछे हटाया, उसकी छुरी के वार से बचकर अपने भाले से उसकी बाँह पर वार किया। साथ

ही लट्ठू के बाएँ पैर पर जोर से एक लात मारा।

लट्ठूसिंह पीड़ा से कराह उठा। उसके हाथ की छुरी फिसलकर नीचे गिर गयी। घुटने पर लात का जो वार हुआ था उसकी चोट से वह खड़ा न हो सका और लुढ़ककर धानवाले गड्ढे में धम्म से गिर पड़ा।

यह देखकर लट्ठूसिंह के अनुचरों में हाहाकार मच गया। उनमें से कुछ लोग डरकर भाग जाने की तैयारी में थे। इतने में एक सवर बाएँ हाथ से भाला ऊपर उठाकर दाऐं हाथ से ताल ठोंकते हुए बोला–"लट्ठूसिंह के बाद सवर-जाति का मैं ही नेता हूँ। शिखिमुखी और उसकी जाति के लोगों को पल-भर में काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा। तुम सब चलो आओ!" यह कहते वह शिखीमुखी की आरे आगे बढ़ा।

शिखिमुखी ने सोचा कि अब खतरा आनेवाला है। इसलिए उसने विक्रमकेसरी और शबर-युवकों को सावधान किया। इसके बाद उनका सामना करने तैयार हुआ। उधर सवर-लोग भी नये नेता के साथ आगे बढ़े। भयंकर खून-खराबी होनेवाली थी। उस हालत में सवरों के पीछे से शिवाल चिल्ला उठा–"बेकार खून-खराबी क्यों? लट्ठूसिंह के दल के लोग हार मानकर अपने हथियार नीचे डाल दे।"

यह चिल्लाहट सुनते ही लट्ठूसिंह के अनुचरों ने पीछे घूमकर देखा। शिवाल कुछ शबरों के साथ भाले ऊपर उठाकर उन्हीं की ओर आ रहा है। आगे से विक्रमकेसरी शबर-युवकों के साथ हमला करने आ रहा है। अब क्या किया जाए? हार माने या खड़े होकर सामना करे?

(अभी है)

# नियम का उल्लंघन

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट गया, उसपर से शव को उतार कर कंधे पर डाल, सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–

"राजन्! तुम्हारी निष्ठा अमोघ है! किन्तु वह सोमशेखर के नियम की तरह कुछ समय तक चालू रहे और अंत में वह वरदान भी शायद हाथ से निकल न जाए। सावधान रहो! श्रम को भूलने के निमित्त मैं तुम्हें सोमशेखर की कहानी सुनाता हूँ। सुनो"

वह यों सुनाने लगा–

सोमशेखर नामक एक ब्राह्मण गंगा के किनारे आश्रम बनाकर रहा करता था। उसका एक नियम था। वह रोज मधुकरी करके, उसे जो कुछ मिलता, उसमें से थोड़ा अतिथि, आगंतुकों को

## बेताल कथाएँ
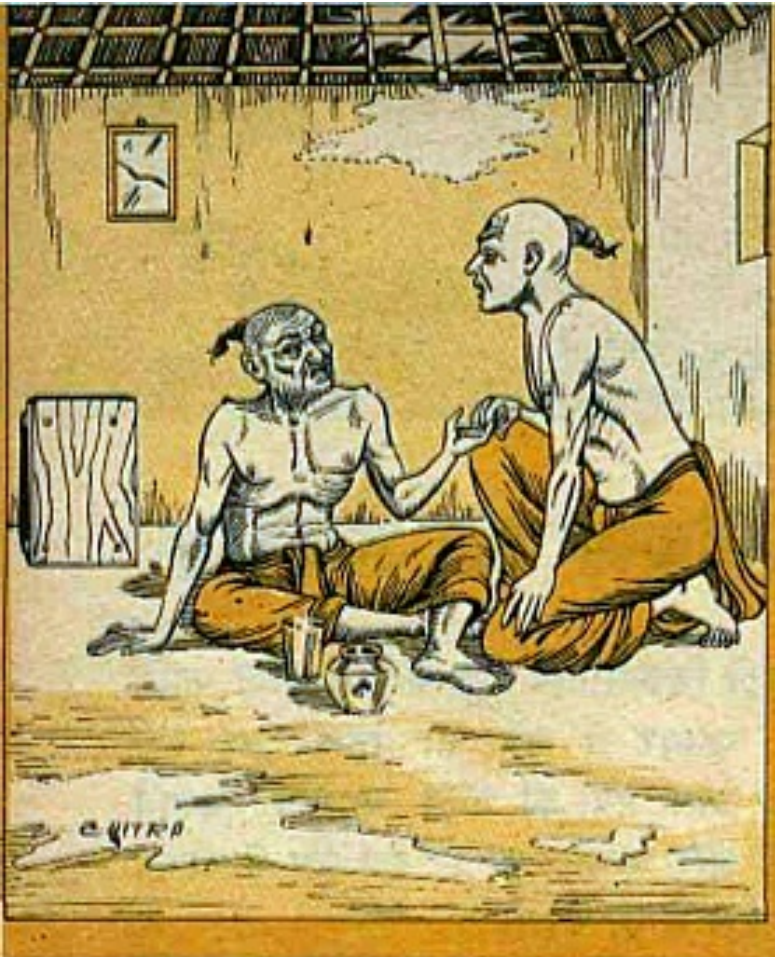
खिलाता, और जो बचता उसे खा लेता। कभी न बचता तो गंगाजल पीकर संतुष्ट हो जाता; चाहे वह और काम करे या न करे, इस नियम का उल्लंघन न करता।

दिन बीतते गये। एक बार उस प्रांत में अकाल पड़ा। सोमशेखर को भिक्षा भी कम मिलने लगी, लेकिन अतिथि और अगंतुकों की संख्या बढ़ गयी। तो भी अपने नियम का वह बराबर पालन करता रहा।

उन्हीं अकाल के दिनों में एक दिन सोमशेखर भिक्षाटन के लिए आश्रम से निकला। वह कुछ ही दूर गया था कि सामने से एक आदमी आया और उसे देखते-देखते बेहोश होकर गिर पड़ा। सोमशेखर पानी छिड़क कर उसे होश में लाया, अपने आश्रम में ले जाकर पानी पिलाया और पूछा–"तुम कौन हो? क्यों ऐसे गिर गये?"

"मेरे खाना खाये कितने दिन हुए, यह भी मैं नहीं जानता। खाने की खोज में भटकते इधर आया।" वह आदमी बोला।

"तुम यहीं आराम करो। मैं भीख माँगकर लाऊँगा और तुमको खिलाऊँगा।" यह कहकर सोमशेखर चला गया। संयोग की बात थी कि उस दिन दुपहर तक उसे एक भी दाना न मिला। आश्रम में कोई आगंतुक खाने का इंतज़ार कर रहा है। उसने खाना खिलाने का वचन भी दिया है। वचन का पालन न करने के बदले आत्महत्या कर लेना सोमशेखर को उचित मालूम पड़ा। यह सोचकर वह गंगाजी में कूद पड़ा।

सोमशेखर नदी में तो डूब गया, लेकिन वह मरा नहीं। उसके सामने एक नारी की मूर्ति अस्पष्ट दिखाई दी। उसने

कहा—"मैं गंगा हूँ। तुम क्यों आत्महत्या करने को तैयार हो गये हो? तुम्हें कैसी तक़लीफ़ है?"

सोमशेखर ने हाथ जोड़कर कहा—"माताजी! भिक्षाटन करके मैं आज तक आगंतुकों और अतिथियों को भोजन खिलाया करता था, चाहे मुझे भले ही न मिले। आज मेरे उस नियम का भंग हो गया। मेरे आश्रम में एक आगंतुक भोजन के इंतज़ार में बैठा है। मुझे आज एक दाना तक नहीं मिला। मैंने सोचा कि नियम को तोड़ने के बदले आत्महत्या कर लेना अच्छा है।"

"बेटा, चिन्ता न करो। यह पात्र ले जाकर तुम अपने आगंतुक को भोजन खिलाओ, यह अक्षय-पात्र है। यह तुम्हारे पास रहे तो तुम चाहे जितने भी अतिथि और आगंतुकों को भोजन दे सकते हो; लेकिन यह तुम्हारे लिए काम न देगा। हमेशा की तरह भीख मांगकर ही अपना पेट भरना होगा। तुम्हें खाना मिले न मिले, तो भी यह पात्र तुम्हारे नियम की रक्षा करेगा।" यह कहकर गंगा देवी ने सोमशेखर के हाथ में एक पात्र दिया और अंतर्धान हो गयी।

सोमशेखर बहुत खुश हुआ और वह पात्र लेकर अपने आश्रम को लौटा।

आगंतुक उसके इंतज़ार में बैठा था। उसके सामने सोमशेखर ने पात्र उलटा दिया। पात्र ने आगंतुक को कई तरह के मिष्टान्न परोस दिये। कई दिनों से उपवास करनेवाला वह आदमी भर-पेट खाकर अपने रास्ते चल दिया।

सोमशेखर ने उस पात्र को अपने सामने भी उलट दिया, लेकिन उसमें से कुछ न निकला। इसलिए अक्षय-पात्र के रहते हुए भी उस दिन उसे भूखा ही रहना पड़ा।

फिर भी सोमशेखर ने चिन्ता नहीं की। वह रोज़ उतनी ही भीख माँगकर लाता जितनी उसकी ज़रूरत थी। जो भी अतिथि आवे उसको बड़ी खुशी से खिलाता। उसका यश बहुत जल्द चारों तरफ़ फैल गया।

सोमशेखर के अन्नदान के व्रत का समाचार सुनकर उस देश का राजा उसे देखने आया। राजा ने अक्षय-पात्र की महिमा अपनी आँखों से देखी। राजा ने यह भी जान लिया कि यह पात्र सोमशेखर के हाथ में रहने से ही खाना देगा, दूसरों के हाथ में जाने से नहीं और सोमशेखर को भी खुद खाना न देगा।

राजा ने सोमशेखर से कहा–"तुम सब लोगों को खाना खिलाते हो; लेकिन खुद तुम्हारा पेट भरने के लिए तुम्हें भीख माँगनी पड़ती है। यह मुझे अच्छा नहीं लगता। कल से मैं तुमको राज-भवन से बढ़िया खाना भिजवा दूँगा।"

राजा सोमशेखर को रोज़ भोजन भेजता था। अब वह भीख माँगने नहीं जाता था। अतिथियों को खिलाने के लिए अक्षय-पात्र था ही। उसको ठीक वक़्त पर राज-भवन से बढ़िया खाना मिलता था।

कुछ दिन बीतने के बाद सोमशेखर में थोड़ा परिवर्तन दिखाई देने लगा। अतिथियों

को भोजन खिलाने में उसका उत्साह घटता गया। उसको लगा कि बहुत-से लोग भूख से पीड़ित नहीं, बल्कि बढ़िया खाने के लिए ही उसके पास आते हैं। उसके खाने के बाद अगर कोई आकर खाना मांगता तो उसपर नाराज़ हो जाता। आज तक वह अतिथि और आगंतुकों को देवता समझता था। लेकिन अब वे लोग उसकी नज़र में भिखारी मालूम होते। कभी-कभी वह उनको डांटता भी था–

"आनेवाले ठीक समय पर आवे तो अच्छा होता! मेरे आश्रम को तुम लोगों ने सराय समझ रखा है?"

धीरे-धीरे अतिथियों की संख्या घटती गयी। साथ ही सोमशेखर का गुस्सा भी बढ़ता गया। आखिर उसके आश्रम में अतिथि और आगंतुकों का आना भी बंद हो गया; लोग भला-बुरा कहने लगे।

यह खबर राजा तक पहुँची। राजा को आश्चर्य हुआ। वह यह समझ न पाया कि सोमशेखर के पास गंगादेवी का दिया हुआ अक्षय-पात्र है। उसे घर-घर, द्वार-द्वार घूमकर भीख माँगने की ज़रूरत भी न रही। राज-भवन से ऐन वक़्त पर उसे खाना मिलता है। ऐसी हालत में सोमशेखर अतिथि और आगंतुकों को नाखुश क्यों करता है? यह बात राजा की समझ में न आयी। यह रहस्य जानने के लिए राजा खुद रवाना हुआ।

राजा के आने का समाचार ब्राह्मण को पहले ही मिल गया। उसने सोचा कि राजा अक्षय-पात्र के बारे में ज़रूर पूछेंगे। लेकिन उसके इस्तेमाल किये बहुत दिन हो गये थे। उसने देखा, पात्र पर मैल जम गयी थी। उसे मलकर साफ़ करने की इच्छा से नदी के पास ले गया और उसे पानी में डुबाया। उसे लगा, कोई उस पात्र को खींच रहा है। आखिर वह पात्र

पानी में ग़ायब हो गया। उसने बहुत ढूंढ़ा, लेकिन कहीं दिखाई न दिया।

बेताल ने कहानी सुनाकर कहा–"राजन्! मेरा एक संदेह है। जिन दिनों में सोमशेखर के पेट भरने की ताक़त न थी, उन दिनों में ही उसने अन्नदान करने का व्रत लिया था। लेकिन सोमशेखर के पास अक्षय-पात्र के होते हुए भी और भीख माँगने से छुटकारा पाकर भी उसने अतिथि और आगन्तुकों के प्रति लापरवाही क्यों दिखायी; अपने व्रत को चालू रखने के लिए उसे अच्छा मौक़ा मिल गया था न! इस प्रश्न का जवाब जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इसपर विक्रमादित्य ने कहा–"जो भूख से परेशान है, वही भूखे की इज्ज़त कर सकता है। भीख मांगनेवाले दिनों में सोमशेखर दूसरों की भूख मिटाने के बाद अपनी भूख मिटा लेता था। उस वक़्त आगंतुक उसके बराबर थे। अक्षय-पात्र के मिलने के बाद भी वह भूख क्या है, समझता था। क्योंकि भीख माँगने से ही उसकी भूख मिटती थी। लेकिन राजा ने जब उसके भोजन का इंतजाम किया, तब भूख के प्रति उसकी इज्ज़त घट गयी, साथ ही भूखे लोगों के प्रति भी। अब अतिथि और आगंतुक उससे हीन हैं। अपने से हीन आदमियों की जब सेवा करनी पड़ी तब सोमशेखर में खीझ और गुस्सा पैदा हुए। वह अपने अतिथियों की बेइज्ज़ती करने लगा। उन लोगों ने भी वहाँ जाना बंद कर दिया। इस वजह से अक्षय-पात्र और राजा के द्वारा किया गया भोजन का प्रबन्ध उसके अनुकूल न होकर प्रतिकूल हो गये।"

राजा के इस तरह मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ ग़ायब हो फिर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
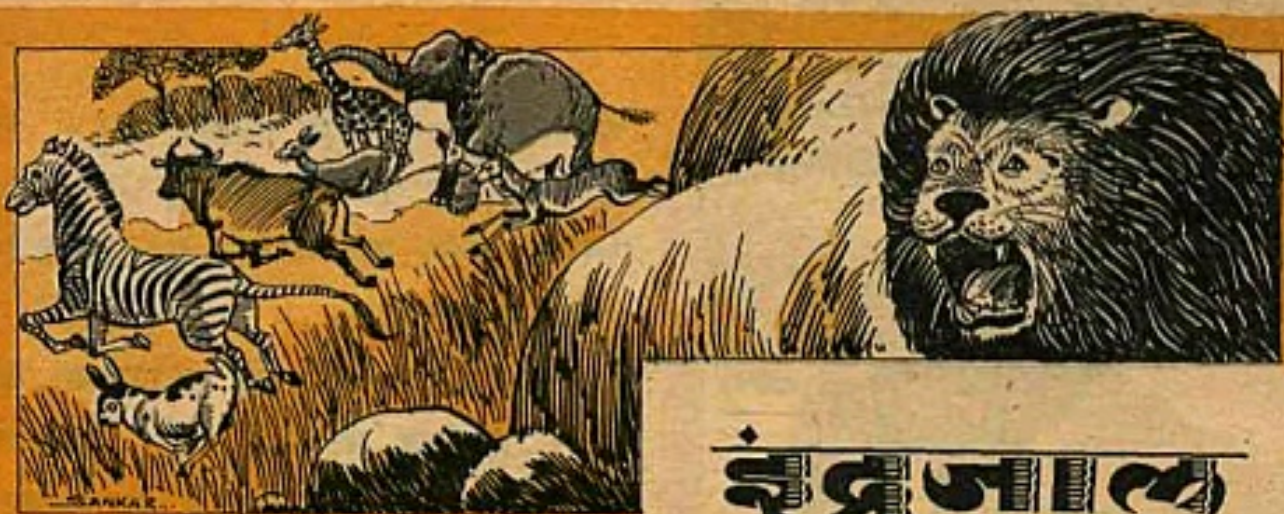
# इंद्रजाल

सुंदरगढ़-जंगल में रमणक नामक एक सियार था। सामान्यत: सियार होशियार होते हैं। रमणक अकलमंदी तो रखता ही था, साथ ही अनुभवी भी था। जंगल के अन्य जंतु रमणक के प्रति बड़े प्रेम दिखाते और ज़रूरत पड़ने पर उसकी सलाह लेते। जंगल के प्राणियों की दुखी जिन्दगी मज़े से कटने लगी।

एक दिन सिंह के गर्जन से सारा जंगल गूंज उठा। सभी जानवर भागकर झाड़ियों में छिप गये। जानवरों ने सोचा कि अब उन्हें शांति और सुख नहीं मिलेगा।

जैसे जानवरों ने सोचा था वही हुआ। दूसरे दिन सुबह तक दो हिरनें और एक जंगली भैंस की जान जाती रही। दोपहर तक दो खरगोश के जोड़े मर गये। शाम तक सेही की जान जाते-जाते बच रही। एक सप्ताह तक हत्याकांड चलता रहा।

उस जंगल में जो नये-नये 'पराक्रम' नामक सिंह आया, उसने अपने को मृगराज घोषित किया। वह जो हत्याएँ कर रहा था, उनका कोई मतलब न था। जंगल के सभी जानवरों ने यह निश्चय किया कि किसी भी तरह से इन हत्याओं को बंद कराना चाहिए। आख़िर वे सब मिलकर रमणक के पास गये और शिकायत की-"दादाजी, मृगराज की दुष्टता से हमें बचाइये।"

"जल्दबाजी न कीजिये, मुझे भी ज़रा सोचने दीजिये।" सियार ने कहा।

"सोचते बैठे रहने का वक़्त नहीं है। देखते-देखते हम सब खतम हो जाएँगे।" जानवरों ने कहा।

सियार गंभीर हो सोचता रहा, आख़िर मुस्कुराते बोला-"अच्छा, भाइयो! मुझे एक उपाय सूझता है। लेकिन उसे आचरण में लाना है, तो किसी एक को जाकर पराक्रम

ए. सी. सर्कार

सिंह से मिलना होगा। तुममें से कौन इसके लिए तैयार हो?" सियार के सवाल का जवाब किसीने नहीं दिया।

"अच्छी बात है, मैं ही जाऊंगा, मेरी उम्र भी ढल गयी है। लेकिन तुमने यह नहीं बताया कि हमारे महाराज का मकान कहाँ है?" सियार ने कहा।

जंगली बिलाव ने अपनी पूँछ उठाकर धीरे से कहा—"चमगादड़ों का निवास बरगद के पेड़ के पास केले के बगीचे की बग़ल में एक गुफा में है।"

सियार ने सब को भेज दिया। अंधेरे के फैलते ही पेट-भर खा लिया, डकार लेते अपनी गुफा से निकल पड़ा। वह बरगद के पेड़ तक दौड़कर ही गया था। लेकिन उसके बाद धीरे से एक-एक क़दम बढ़ाते आगे बढ़ा।

गुफा में से खुर्राटे की आवाज़ आ रही थी। मृगराज सो रहा था। गुफा के आगे कई शव और कंकाल तितर-बितर पड़े थे। उनमें अधिकांश शव रमणक के मित्रों के ही थे। उसे कुछ करने को न सूझा, चुपचाप लौट आया।

रमणक को रात-भर नींद नहीं आयी। वह सोचता ही रहा। प्रातःकाल जब मलयमारुत बहने लगा तब उसकी खोंपड़ी में ही एक अच्छा उपाय सूझा। वह झट उठकर केले के बगीचे की ओर दौड़ पड़ा।

दूसरे दिन शाम के होते ही सभी जानवर सियार के पास आये। उन सबने देखा कि सियार बड़ी ख़ुशी में है। उनको देखकर सियार ने कहा—"दोस्तो! कल से तुम्हें किसी तरह का डर न रहेगा। महाराजा पर छोटे-से इंद्रजाल का प्रयोग करके उनको स्वर्गलोक में भिजवा दूंगा। कल सुबह तुम लोग यहाँ आ जाओ।" यह कहकर सियार ने उनको भेज दिया।

दूसरे दिन सुबह जब सभी जानवर आये, सियार ने गैंडे की ओर घूमकर कहा–"भाई, तुमको एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी होगी।" गैंडे ने अपनी सम्मति सूचित करते सिर हिलाया। सब जानवरों के वहाँ पहुँचते ही सिंह की नींद खुल गयी।

"महाराज! सिंह पराक्रम! हम सब जंगल के निवासी आपको अभिवादन करने आये हैं।" गैंडे ने कहा।

"आज तक क्या करते रहें? तुम लोगों को कभी आना चाहिए था!" सिंह ने जवाब दिया।

सियार ने आगे बढ़कर समझाया–"क्या कहूँ महाराज! आपसे भी बढ़कर ताक़तवर दो पैरोंवाले जानवर ने हमको यहाँ आने से रोक दिया। तो भी आज हिम्मत करके आ गये। क्योंकि वह कहता है कि अपने इंद्रजाल से आपकी जान लेगा। उसने अपने इंद्रजाल से ही यहाँ के सभी केलों को दो-दो टुकड़ों में चीर डाला है, कहता है आपको भी ऐसे ही दो टुकड़ों में चीर डालेगा। हम आपको सावधान करने आये हैं।"

सिंह ज़ोर से हँस पड़ा और बोला–"यह तो पागल की बकवास है। इंद्रजाल से
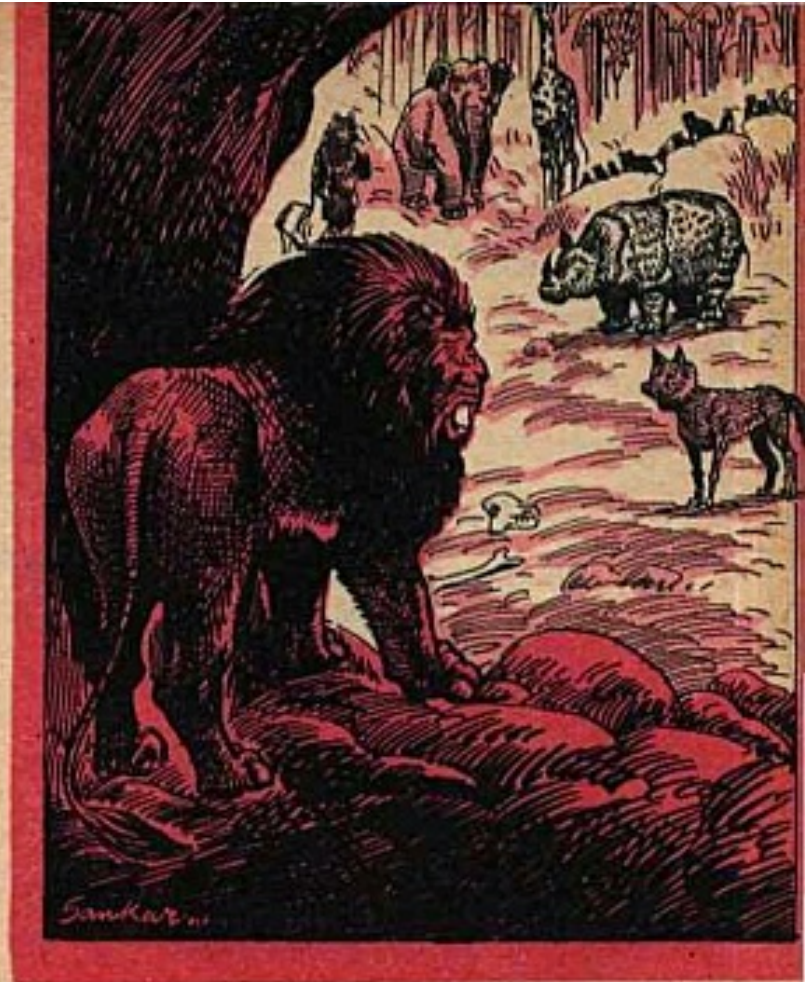
चीरना क्या! देखो, केले के बगीचे के दो पेड़ों में गौंद लगे हैं। लेकिन उनमें एक केला भी फाड़ा नहीं गया!"

"वह आदमी बड़ा उद्दंड है, तो भी जाँच करके देखेंगे।" यह कहते बंदर पल-भर में कुछ केले तोड़ लाया। सिंह ने एक केले का छिलका निकाला। भीतर केला दो टुकड़ों में फटा हुआ था। इस तरह पाँच-दस केले के छिलके निकालकर देखा, बाहर से फटे नहीं थे, लेकिन भीतर दो टुकड़ों में फटे हुए थे। यह इंद्रजाल ही होगा! सिंह का चेहरा पीला पड़ गया। उसने पूछा–"वह

दो पैरोंवाला कहाँ? उसका तुरंत खात्मा करना है।"

"डरिये नहीं, महाराज! दो पैरोंवाला आपका क्या बिगाड़ सकता है?" सिंह को और डराने के लिए सियार ने कहा।

"तुम्हारी यह सलाह है कि दो टुकड़ों में फाड़ने तक बैठे मैं देखता रहूँ?" सिंह ने नाराज़ होकर कहा।

सियार ने अपनी बगल में से लाल-अंजन की डिबिया निकाली और कहा– "महाराज! यह दिव्य दृष्टि देनेवाला अंजन है। वह दो पैरोंवाला इस अंजन को अपनी आँखों में लगाकर ही देख पाता है कि कौन चीज़ कहाँ है। मैं उसकी आँख बचाकर चुपके से इसे चुरा लाया हूँ। आप भी इसे अपनी आँखों में लगाकर देखिये। दो पैरोंवाला जहाँ भी हो, आपको दिखाई देगा।" यह कहकर सियार ने अंजन की डिबिया सिंह के हाथ में धर दी।

सिंह ने अंजन को अपनी आँखों में लगाया ही था कि उसकी दोनों आँखें जाती रहीं। दूसरे ही क्षण में गैंडे ने सिंह के कलेजे पर अपना सींग मारा। बाक़ी सब जानवरों ने उसपर हमला किया और उसे यमलोक भेज दिया। इस तरह सिंह की झंझट से सब जानवर बच गये।

इसके बाद जानवरों ने सियार से पूछा–"दादाजी! आपका उपाय तारीफ़ करने योग्य है। लेकिन हमें यह बताइये कि केले किस इंद्रजाल से फट गये थे?"

"अरे! यह कौन बड़ी बात है! केले में एक सुई चुभोकर, एक सिरे से दूसरे सिरे तक उसे ले जाए तो छिलके पर सुई के चुभोने का छेद मात्र रहेगा। लेकिन भीतर का हिस्सा दो टुकड़ों में फट जाएगा। छोटे बच्चे भी यह इंद्रजाल कर सकते हैं।" सियार ने कहा।

# सच्चा फ़ैसला

प्राचीन काल में गौतमी नदी के किनारे धनगुप्त नामक एक दरिद्र रहता था। वह यह सोचकर बड़ा दुखी होता था कि उसका नाम निरर्थक है। उसने धन कमाने के कई प्रयत्न किये, लेकिन एक भी सफल न हुआ। आखिर ज़िन्दगी से निराश होकर वह नदी में कूद पड़ा।

ठीक उसी समय उधर से निकलनेवाले एक गोसाई ने धनगुप्त को नदी में डूबने से बचाया और पूछा—"तुम क्यों मरना चाहते हो?"

धनगुप्त ने अपनी सारी कहानी सुनायी। गोसाई ने उसे एक ताबीज़ देकर समझाया—"तुम इसे बांधे रहोगे तो तुम्हारी क़िस्मत खुल जाएगी, धनी बन जाओगे।" यह कहकर गोसाई अपने रास्ते चला गया।

यह नहीं कह सकते कि वह गोसाई के ताबीज का प्रभाव था या धनगुप्त में पैदा हुआ आत्म विश्वास था—उस दिन से वह जो भी काम करता, वह सफल होता गया। कुछ ही दिनों में वह भी गाँव के धनियों में से एक गिना जाने लगा। उसने एक सुंदर कन्या से शादी की। कुछ समय बाद उसे एक पुत्र भी पैदा हुआ। अब उसके दिन बड़े आराम से कटने लगे और उसे किसी भी बात की चिंता न थी।

धीरे-धीरे उसने बड़े पैमाने पर व्यापार शुरू किया, कई खेत, मवेशी, घर, वाहन सब कमाया। अपने ये सारे काम देखने के लिए एक मुंशी को भी नियुक्त किया।

कुछ समय के बाद धनगुप्त की पत्नी मर गयी। और कुछ दिन बाद धनगुप्त भी बीमार पड़ा। जब उसे मालूम हुआ कि उसकी मौत निकट है और अपने पुत्र

विमला अपसंगीकर

की देखरेख करनेवाला कोई नहीं है, यह सोचकर उसने गाँव के चार बुजुर्गों को बुला भेजा, उनके सामने वसीयत लिखायी। उसमें यों लिखवाया–

"मेरे मरने के बाद मेरा मुंशी मेरी सारी ज़मीन-जायदाद का रक्षक रहेगा और मेरे पुत्र की सभी ज़रूरतों की पूर्ति करेगा। जब मेरा पुत्र बालिग होगा, तब मुंशी मेरी जायदाद में से वह जितना अपने लिए पसंद करेगा, उतना मेरे पुत्र को देगा और बाक़ी अपने पास रखेगा।"

यह वसीयत देख सभी बुज़ुर्ग अचरज में आ गये। मुंशी बहुत खुश हो गया। उसने सोचा कि उसके मालिक का अंतिम समय में मति-भ्रम हो गया है।

वसीयत के लिखाने के बाद निश्चित होकर धनगुप्त ने सदा के लिए अपनी आँखें मूंद लीं।

धनगुप्त के पुत्र के बालिग होने तक मुंशी ने उसे किसी तरह की कमी होने न दी।

धनगुप्त का पुत्र जब बालिग हुआ, तब उसने मुंशी से अपनी जायदाद की माँग की।

मुंशी ने एक ताबीज़ उसके हाथ में देते हुए कहा–"इस ताबीज़ के ज़रिये तुम्हारे पिता ने यह सारी ज़मीन-जायदाद कमा ली है। तुम्हारे पिता की जायदाद में से यही तुम ले लो, बाक़ी सब मेरी है।"

धनगुप्त का लड़का विस्मय में पड़ गया। उसने मुंशी से पूछा–"यह कैसा अन्याय है! मेरे पिता की सारी जायदाद आप कैसे ले सकते हैं? उसपर तो पूरा अधिकार मेरा है।"

"तुम्हारे पिता ने वसीयत में यही लिखाया है, उनकी जायदाद में से मैं जितना चाहूँ, ले सकता हूँ। जितना चाहूँ, उतना तुमको दे सकता हूँ। चाहे तो तुम देख सकते हो!" मुंशी ने कहा।

धनगुप्त का पुत्र अपने पिता की वसीयत लेकर काजी के पास गया। उसने शिकायत की–"इस वसीयत की आड़ में मुंशी मेरे पिता की सारी जायदाद हड़फना चाहता है। आप इसका इन्साफ़ कीजिये, मेरे प्रति अन्याय न हो।"

काजी ने सारी वसीयत ध्यान से पढ़ी और मुंशी को बुलवाकर पूछा–"क्यों जी! यह लड़का बालिग हो गया है। अपने पिता की जायदाद चाहता है। यहाँ तक शिकायत लाने की क्या ज़रूरत थी? आप ही उसकी जायदाद दे देते!"

"जी हुज़ूर! मैंने कभी यह नहीं कहा कि मैं न दूंगा। मेरे मालिक ने सारी ज़मीन-जायदाद इस ताबीज़ के ज़रिये ही कमायी है। इसलिए मैं उस ताबीज़ को लेने के लिए कहता हूँ, बाक़ी सब मैं रख लूँगा। वसीयत में साफ़ लिखा है कि मैं जितना चाहूँ उतना रख सकता हूँ।" मुंशी ने कहा।

"तब तो उस ताबीज़ को छोड़कर बाक़ी सारी जायदाद तुमको पसंद है?" काजी ने पूछा।

"जी हाँ! यही तो मैं आपसे विनती करता हूँ!" मुंशी ने कहा।

"अच्छा, ऐसी बात हो तो तुम वह ताबीज़ रख लो और तुम्हारे मालिक की सारी जायदाद इस लड़के को दे दो। इस वसीयत में यही लिखा है कि तुमको जो पसंद है वही लड़के को दे दो। यह कहीं नहीं लिखा है कि तुमको जो पसंद है, वही तुम रख लो।" काजी ने कहा।

मुंशी का चेहरा सफ़ेद हो गया। उसने धनगुप्त की वसीयत फिर से पढ़ ली। उसे लगा कि काज़ी का कहना बिलकुल सत्य है। वसीयत को समझने में उसकी ग़लती हो गयी। उसने उसी समय धनगुप्त की सारी जायदाद उसके लड़के को सौंप दी।

# मालूम-नहीं मालूम

मंगलपुरि राज्य पर मायवर्मा मामक राजा राज्य करता था। जब उसका प्रधान मंत्री मर गया, तब राजा ने नये मंत्री की नियुक्ति नहीं की। वही राजा मंत्री भी बनकर राज्य करने लगा। उसने सुना था कि राजा को जनता के सुख-दुखों को खुद जान लेना है, इसलिए वह वेष बदलकर, दो अंगरक्षकों को साथ ले, जब-तब जनता के बीच घूमा करता था। लेकिन राजा चालाक और होशियार न था।

एक दिन राजा वेष बदलकर घूम रहा था कि एक घर में पति-पत्नी के बीच वाद-विवाद की बातें सुनाई दीं।

"छिः छिः यह क्या किया तुमने? अगर यह कहती कि नहीं जानती, मैं ही कर देता।" पति ने कहा।

"आपको क्या मालूम? कहते हैं, हर बात को मैं जानता हूँ। लेकिन मेरा छोटा शिशु जो जानता है, उतना भी आप नहीं जानते!" पत्नी ने कहा।

"बकवास मत करो! तुम कुछ जानें, तब तो! यह छोट काम भी मैं नहीं कर सकता? तुमने मुझे क्या समझ रखा है? मौक़ा मिले तो इस राज्य पर हुकूमत करने की अक्लमंदी भी मैं रखता हूँ।" पति ने बताया।

यह बात कानों में पड़ते ही राजा अपने कान बंद कर महल को लौट पड़ा। दूसरे दिन ही उसने एक क़ानून अमल किया। उस क़ानून के अनुसार राज्य का कोई भी व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि मुझे सब मालूम है। अगर कोई यह कहे-"मुझे मालूम है" उसे कड़ी सजा दी जाएगी।

इस क़ानून से लोगों को बड़ी तक़लीफ़ ही हुई। सज़ा के डर से वे हर बात का जवाब "नहीं मालूम" देने लगे। यही उनकी आदत-सी हो गयी।

रमेश मादव

कुछ दिनों बाद उस राज्य में दूसरे देश के दो आदमी आये। उन लोगों ने जान लिया कि किसी से कुछ पूछें तो वे "हमें मालूम नहीं" यही जवाब देते हैं। कुछ लोगों को इकट्ठे देख उन दोनों ने पूछा—"तुम लोग हर बात का जवाब 'नहीं मालूम' देते हो! ऐसा क्यों?"

"नहीं मालूम जी! हमें कुछ नहीं मालूम। आप लोग जो पूछते हैं, उनका एक भी जवाब हमें नहीं मालूम।" यही जवाब फिर से उन लोगों ने दिया।

वे अपने मन गुनगुनाने लगे—"यह कैसा बुरा देश है! किसी से जो भी पूछो, यही कहते हैं—हमें नहीं मालूम!"

जब ये सारी बातें हो रही थीं, तब राजा वहीं पर वेश बदलकर भीड़ में था। जनता की और विदेशियों की बातें भी राजा ने सुन लीं।

इसलिए राजा ने दूसरे दिन एक दूसरा क़ानून अमल किया—राज्य-भर में किसीको किसी भी हालत में 'नहीं मालूम' नहीं कहना चाहिए! ऐसा जो कहेगा, उसे कठिन सजा मिलेगी।"

उस दिन से राज्य में कहीं "मालूम" शब्द या "नहीं मालम" शब्द भी सुनाई नहीं देता था। लगता था कि जनता का मुंह सिलाया गया है!

यह सब विदेशियों के रहते ही हुआ था। इसलिए उनका सारा काम-वाम ठप्प हो गया। वे राजा के दर्शन करने गये और उनके नाम एक पत्र भेजा। उसमें यों लिखा था—

"राजन, हम लोग दूसरे देश के यात्री हैं। आपके क़ानूनों ने हमारे मुंह बंद कर रखे हैं। विदेशी होने के कारण ये क़ानून हमारे काम में बाधा डाल रहे हैं। आपके इन क़ानूनों का कोई कारण जरूर होगा। आप वह कारण हमें

बतायेंगे तो हम उस हालत को सुधार सकते हैं।"

राजा ने विदेशियों को बुलवा कर उन्हें उस दंपति की बातचीत सुनायी।

विदेशियों ने राजा की बातें सुनकर कहा–"उस दंपति ने किस संदर्भ में ये बातें की हैं, उसे समझ लेना ज़रूरी है।"

राजा अपना वेश बदलकर, उन विदेशियों को साथ ले उस दंपति के घर पहुँचा। घर के मालिक को बुलाकर पूछा–"तुमने कुछ दिन पहले अपनी पत्नी से कहा था कि तुम सब जानते हो, यहाँ तक कि राज्य चलाना भी जानते हो। क्या तुमको याद है!"

"मुझे अपने घर पर राज्य करना नहीं मालूम है। मैं कहाँ सारे राज्य को चला सकता हूँ? मैंने यह बात क़ानून बनने के पहले कही थी। उस दिन मेरी पत्नी ने रसोई बिगाड़ दी थी। इसलिए धमकी देते कही थी। जो कुछ नहीं जानती, वह बराबर यह कहती फिरे कि 'आप कुछ नहीं जानते' तो मुझे कैसे लगेगा? क्या गुस्सा नहीं आयेगा! उस जोश में कुछ बक दिया।" उस आदमी ने कहा।

"सुना, महाराज! साधारण लोग यूँही कुछ कह देते हैं तो आप उसपर ध्यान देते हैं। इससे कैसी तकलीफ़ पैदा होती है? आपको इस बात के संबंध में सलाह देनेवाले मंत्री भी नहीं रहे क्या?" विदेशियों ने राजा से कहा।

"मेरा पुराना मंत्री मर गया है। नये मंत्री को अभी तक मैंने नहीं चुना। तुम दोनों मेरे मंत्री बनकर मदद दोगे? लगता है, तुम दोनों बड़े अक्लमंद हो!" राजा ने कहा।

वे दोनों मंत्री बनने को राजी हो गये। उस दिन से राज्य के काम बिना रोक-टोक के चलने लगे।

# कूड़े की गठरी

कुशीलपुर पर नेत्रानंद नामक राजा राज्य करता था। उसके राज्य में अन्याय, अत्याचार और चोरियाँ नाम मात्र के लिए भी न थीं। राज्य के सभी अधिकारी बहुत ही समर्थ थे। राजा भी अपने-अपने कर्तव्य के पालन में प्रवीणता दिखानेवालों को विशेष पुरस्कार देकर उनका सम्मान करता था। इसलिए वे भी राज्य की रक्षा में और अन्य कामों में भी बहुत जागरूक थे।

उस राज्य में एक दिन एक भिखारी-जैसा आदमी आया। उसके कपड़े गंदे और फटे थे; उसकी दाढ़ी बढ़ी थी। उसके शरीर पर धूल जमी थी। उसकी पीठ पर चिथड़ों की एक गठरी थी। वह रास्ते-भर में भीख माँगता था, जो कोई उसका परिचय पूछता, उससे यही कहता कि मैं भिखारी हूँ, अनाथ हूँ। वह शाम तक भीख माँगता रहा, रात को एक सराय में पहुँचा, चबूतरे पर लेटकर गठरी अपने सिरहाने रख ली और सो गया।

आधी रात के समय जब कि वह गहरी नींद में था, किसीने चालाकी से वह गठरी ले ली और उसकी जगह दूसरी रखकर भाग गया।

सुबह उठकर उसने देखा, उसकी गठरी की जगह दूसरी गठरी है। वह बहुत पछताया, आखिर सीधे राजा के पास जाकर बोला—"महाराज, मैंने सुना था कि आपके राज्य में चोरियाँ नहीं होतीं, अन्याय और अत्याचार भी नहीं होते। इसलिए यहीं पर बस जाने के ख्याल से, मेरे पास जो कुछ था, गठरी बाँधकर इस देश में ले आया। कल रात को मैं सराय में सो रहा था, किसी ने मेरी गठरी हड़प ली। मेरी जो कुछ संपत्ति थी, सब चली

हरिशंकर

गयी। आप से मेरी विनती है कि चोरी का पता लगाकर मुझे अपनी संपत्ति दिला दें।"

राजा के पूछने पर भिखारी ने अपनी कहानी सुनायी—मेरा नाम सोमनाथ है। मैं तोण्डमंडल का निवासी हूँ। वहाँ पर मैं गहनों का व्यापार करता था। एक सप्ताह पहले कुछ लोगों ने मेरा घर लूटा और उसे जलाया। मेरी पत्नी और बच्चे घर के साथ जलकर राख हो गये। मैं बड़ी मुश्किल से जान बचाकर बाहर निकला। मेरे पास चार हीरे और चार सोने की ईंटें बच गयी थीं। उनको चीथड़ों की गठरी में बाँधकर भिखारी के वेश में इस देश में आया। मैं चाहता था, यहाँ पर इज्जत के साथ जिऊँ। मेरे सर्वस्व लुट गया। अब आप ही मेरा न्याय कीजिये।

राजा ने सारी बातें सुनकर कहा—"यह कहना अतिशयोक्ति है कि इस देश में चोरियाँ नहीं होतीं और अत्याचार नहीं होते। ऐसी बातें तो इस देश में ही होती हैं। लेकिन सचाई यह है कि यहाँ जो चोरियाँ होती हैं, उनका पता जरूर लग जाता है। अत्यायार होता है तो जल्दी प्रकट होता है। इसलिए तुम अपनी गठरी की चिन्ता न करो। मैं देखूंगा, वह जल्दी तुमको मिल जाए।"

इसके बाद राजा ने अपने नौकरों से कहा—"सोमनाथ को खूब नहलाकर, पहनने के लिए कपड़े दो और भोजन खिलाओ।"

नौकरों ने सोमनाथ को ले जाकर खूब स्नान कराया, अच्छे कपड़े दिये बढ़िया भोजन भी खिलाया। उस रात को सोमनाथ राजा की कचहरी में ही सो गया।

दूसरे दिन सुबह राजा ने सोमनाथ को बुलाकर, उसको चीथड़ों की गठरी दिखाकर पूछा—"यही तुम्हारी गठरी है?"

सोमनाथ ने झट उसे पहचान लिया और बोला कि वह उसीकी है। उसके कहे मुताबिक़ गठरी में चार सोने की ईंटें थीं।

"चोरी किया गया माल इतनी जल्दी ज्यों का त्यों मिला, यह अचरज की बात है। लेकिन महाराज, चोर कहाँ?" सोमनाथ ने राजा से पूछा।

"तुम्हारी चीज़ें तुम्हें मिल गयी हैं। चोर की चिन्ता क्यों करते हो? उसकी बात हम देख लेंगे। इतनी संपत्ति के रहते तुमको मेरे देश में भिखारी की तरह घूमने की ज़रूरत नहीं। कहो! तुम किस तरह की ज़िन्दगी बिताना चाहते हो?" राजा ने पूछा।

"महाराज, इस गठरी में जो कुछ है, वही मेरी संपत्ति है। इसको उचित मूल्य पर बेचकर मैं आराम से ज़िन्दगी बसर करना चाहता हूँ।" सोमनाथ ने कहा।

"ऐसी बात हो तो मैं ही एक हीरा ख़रीद लूँगा। बताओ, उसका मूल्य क्या है?" राजा ने पूछा।

"आप ही लेना चाहते हैं तो मूल्य क्यों? एक हीरा भेंट के रूप में लीजिये।" सोमनाथ ने कहा।

"महाराज! मेरी आंखों के सामने पत्नी और बच्चे बेमौत मरे। मेरा दिमाग़ अस्थिर है। हीरे का मूल्य जो उचित समझें वही दीजिये।" सोमनाथ ने कहा।

"अच्छा, हीरे के जौहरियों से उनका मूल्य लगवाकर, वे जितना कहें, उतना ही दूंगा। मैंने दो-चार दिन पहले दो हीरे खरीदे हैं। अभी तक उनका मूल्य नहीं चुकाया। उन्हें देख बतलाओ, कितना दे सकते हैं?" यह कहकर राजा ने दो हीरे मंगवाये और सोमनाथ के हाथ में दिये।

सोमनाथ ने उनको परखने का अभिनय करते हुए कहा—"एक-एक के दो हज़ार दे सकते हैं।"

"बस! इतना कम! जौहरी तो एक-एक का दाम दस हज़ार बतला रहा था।" यह कहकर राजा दोनों हीरे सोमनाथ के पास छोड़कर चला गया।

उस रात को भी सोमनाथ कचहरी के कमरे में सो गया। लेकिन बड़े तड़के उठकर अपनी गठरी ले पिछवाड़े में पहुँचा। चहार दिवारी लांघकर जब वह भाग रहा था, राजभटों ने उसे पकड़ लिया और जेलखाने में बंद किया।

"बड़ी खुशी की बात है! एक हीरा भेंट में दो और दूसरा हीरा मूल्य पर बेचो।" राजा ने फिर कहा।

"आप खरीदना ही चाहते हैं तो अपनी इच्छा से जो भी मूल्य दें, मुझे स्वीकार है।" सोमनाथ ने जवाब दिया।

"पहले तुम उसकी असली क़ीमत बताओ, फिर मैं अपनी इच्छा के अनुसार दूंगा।" राजा ने कहा।

"उसकी असली क़ीमत सौ मुद्राएँ हैं।" सोमनाथ ने झट कहा। "इतनी कम! तुम अपने को जौहरी बतलाते हो! इसका मूल्य इतना कम क्यों कहा?" राजा ने पूछा।

दूसरे दिन राजा ने सोमनाथ की कैफ़ियत तलब की। उस वक़्त राजा ने ये बातें प्रकट कीं।

अधिकारियों की आँखों से बचकर कोई इस राज्य में क़दम नहीं रख सकता। सोमनाथ ने जब इस राज्य की सीमा पार की तभी से अधिकारी उनकी निगरानी कर रहे हैं।

चीथड़ों की गठरी के प्रति सोमनाथ की सवधानी देख स्पष्ट हो गया कि उसमें क़ीमती चीज़ें हैं। सराय के अधिकारी ने ही आधी रात के समय वह गठरी सोमनाथ के सिरहाने से निकलवायी। सोमनाथ ने पहले से ही सुन रखा था, कि इस राज्य में बिलकुल चोरियाँ नहीं होतीं। राज्य की तरफ़ से सुरक्षा का ऐसा कठिन प्रबंध है, कोई चोरी करने का साहस तक न कर सकेगा। इसलिए वह बेख़बर सो गया।

सराय के अधिकारी ने चोरी की गठरी राजा के पास भिजवा दी। अपनी गठरी की चोरी का समाचार सोमनाथ ने सराय के किसी भी व्यक्ति को नहीं दिया; बल्कि सीधे राजा के पास जाकर शिकायत करने में कोई विशेष बात थी। सोमनाथ को यह कतई पसंद न था ।क ७ल गठरी में जो क़ीमती चीज़ें हैं, उसकी खबर चोरों और मामूली आदमियों को भी लगे। क्योंकि उस गठरी का माल चुराया हो सकता है।

सोमनाथ ने अपनी कहानी राजा को जो सुनायी, उसमें एक भी बात सच न थी। अपनी गठरी में जो कुछ संपत्ति बची थी, उसके बारे में राजा से शिकायत की। अपनी सारी जायदाद, पत्नी, बच्चे, और घर के भस्म होने पर वह अपने गाँव छोड़कर यहाँ पर आया। उसे यहाँ तक आने में कम से कम दस दिन लगे होंगे।

सोमनाथ ने कहा था कि वह जलनेवाले घर से थोड़ी-सी संपत्ति के साथ जान बचाकर भाग आया है। लेकिन उसके शरीर पर कोई घाव या छाले का चिन्ह नहीं है। यह बात राजभटों को स्नान कराते समय स्पष्ट मालूम हुई।

भोजन करते समय भी उसके खाने का ढंग देख यह स्पष्ट मालूम हुआ कि वह धनी नहीं है और बहुत ही साधारण खाना खाया करता था। बढ़िया खाना खाने का तरीक़ा भी वह नहीं जानता था।

उसे हीरों का मूल्य बिल्कुल मालूम न था। उसके पास जो हीरे थे, उनका मूल्य तो बतला न सका, उल्टे राजा के दिखाये दो शीशे के टुकड़ों को सोमनाथ ने हीरे समझकर, उनका मूल्य दो-दो हज़ार बतलाया।

ये सारे समाचार जान लेने के बाद राजा ने सोचा कि सोमनाथ अपनी गठरी के साथ रात के समय भागने की कोशिश करेगा। इसलिए राजा ने पहले ही उसको भागते समय पकड़ने के लिए इंतजाम किया।

राजा के यह सब बताने के बाद सोमनाथ को अपनी ग़ल्ती माननी पड़ी। उसने बताया कि वह बहुत ही ग़रीब था। गुज़ारा करना मुश्किल होते देख वह जो भी नौकरी मिलती, किया करता था। फिर अमीरों के यहाँ उसे नौकरी मिलने लगी, तब से वह अमीरों की सेवा करके ज़िन्दगी काटता था। एक व्यापारी के यहाँ नौकर था, मौक़ा पाकर उसकी संपत्ति में से चार हीरे और चार सोने की ईंटें चुराकर भाग आया है। उस देश में रहता तो कभी न कभी पकड़ा जाता इसलिए वेष बदलकर इस राज्य में आ गया।

राजा ने सोमनाथ को कड़ी सज़ा दी और हीरे और सोना उस व्यापारी के पास पहुँचवा दिया।

# भले का भला

आनंदपुर नामक गाँव में धनी कांतिवर्मा रहता था। उसके कोई संतान न थीं। दिन-रात वह इसी चिन्ता में पड़ा रहता।

एक दिन उस गाँव में एक योगी आया। वह सदा घूमता रहता है। किसी भी गाँव में तीन दिन से ज्यादा नहीं रहता। वह जो प्रसाद देता है; उसे पाने सारी जनता टूट पड़ती है। उस प्रसाद की महिमा पर सब विश्वास करते थे। कांतिवर्मा ने उस योगी के दर्शन करके अपना दुखड़ा सुनाया। उस समय योगी दूध पीने जा रहा था। झट उसने उसमें से थोड़ा दूध एक दोने में डाल दिया और कांतिवर्मा के हाथ में देते हुए कहा—"अगर तुम्हारी पत्नी एक ही घूंट में यह दूध पी जाएगी तो तुम्हारी इच्छा पूरी होगी।"

कांतिवर्मा उस दूध को ले जाकर अपनी पत्नी के हाथ में देते हुए बोला—"इसे एक ही घूंट में पी डालो।" कांतिवर्मा की पत्नी ने उस दोने का नैवेद्य किया, तीर्थ की भांति दूध को हाथ में डालकर आँखों से लगाया और दो घूंटों में पिया।

कुछ समय बाद वह गर्भवती हुई। महीनों के पूरे होते ही उसके दो लड़कियाँ हुईं। लड़कियाँ देखने में सुंदर थीं। लेकिन जब वे रेंगने लगीं तब उनके एक-एक पैर कमज़ोर दिखाई देने लगा। एक पैर कमज़ोर होने के कारण वह ठीक से चल न सकीं।

कांतिवर्मा ने बहुत धन खर्च करके लड़कियों का इलाज कराया; लेकिन कोई फ़ायदा न रहा। वे घर से बाहर न निकल सकती थीं। बाहर जाने में लजाती थीं। शायद लड़कों को यह लंगड़ापन

दिनेश

ज्यादा खटकता न हो, लेकिन ये तो लड़कियाँ ठहरीं!

काँतिवर्मा अपनी लड़कियों को बड़े प्रेम से पालता रहा।

बारह साल बाद वह योगी उस गाँव में फिर आया। कांतिवर्मा ने उसके दर्शन कर निवेदन किया—"महात्मन्! आपके अनुग्रह से मेरे दो लड़कियाँ हुईं। लेकिन वे लंगड़ी हैं। उनके भविष्य की कल्पना करते ही डर लगता है। आप ही अनुग्रह करके लंगड़ेपन को दूर कीजिये।"

योगी थोड़ी देर आँखें बंद करके सोचता रहा और बोला—"तुम्हारी पत्नी ने मेरे कहे अनुसार नहीं किया; इसीलिए यह समस्या आ पड़ी है। मेरे पास इस केले के अलावा कुछ नहीं है।" यह कहकर केले का एक टुकड़ा करके उसने निगल डाला और दूसरा कांतिवर्मा के हाथ में देते हुए कहा—"इसे तुम किसी एक को दो, जो तुम्हें अधिक पसंद है।" इसके बाद योगी ने कांतिवर्मा को भेज दिया।

कांतिवर्मा केला लेकर निकला। वह सोचता रहा कि अब दोनों लड़कियों में किसे दिया जाए? बड़ी कठिन समस्या थी। वह सोचने लगा कि योगी तो जानता है, दोनों लड़कियाँ लंगड़ी हैं, लेकिन एक को प्रसाद क्यों दिया? इससे एक का लंगड़ापन दूर हो जाए तो दूसरी लड़की कैसी दुखी होगी! मेरी दृष्टि में दोनों बराबर हैं। मैं कैसे देखता रह सकता हूँ कि एक अच्छी रहे और दूसरी लंगड़ी ही बनी रहे।

यह सोचते सर झुकाये कांतिवर्मा चलता रहा। उसे किसीके रोने की आवाज सुनाई दी। सर उठाकर देखा—एक कुएँ के पास एक युवती बैठी रो रही है। एक युवक उसे समझाने की बड़ी कोशिश

कर रहा है। कांतिवर्मा को पास में ही खड़े देख युवक ने कहा–"महाराज! आप कृपया इसे समझा दीजिये; यह कुएँ में गिरना चाहती है।"

"असल में बात क्या है?" कांतिवर्मा ने युवक से पूछा।

युवक ने यों जवाब दिया–"बचपन में ही लकवा मारने से उसके बाएँ हाथ और बाएँ पैर अचेतन हो गये। उससे किसीने शादी न की। अगर मैं उससे शादी न करता तो वह जिंदगी भर अविवाहित ही रहती। मैंने उसकी जिंदगी का उद्धार करना चाहा। इसलिए मैंने उसपर रहम करके उसके साथ शादी की और घर लाया।

मैं अमीर नहीं हूँ। मेहनत करने से ही पेट भरता है। घर पर पत्नी की हर तरह से मदद और सेवा करके मैं काम पर बाहर चला जाता हूँ।

कुछ दिन बीत गये। मैं उसके वास्ते जो तक़लीफ़ उठा रहा था, उसे देख वह सहन नहीं कर पायी। सब कार्य पति के करते वह चुपचाप बैठे रहकर पति से सेवा कराना नहीं चाहती थी। यह बात उसे बुरी भी लगी थी। आखिर उसने यह निश्चय किया कि अगर वह

आत्महत्या कर ले तो उसका पति दूसरी शादी करके सुखी रहेगा।

मैंने यह जानकर ही शादी की, उसके एक पैर और एक हाथ बेकाम हैं। मैंने उसे यह समझाने की बड़ी कोशिश की कि उसकी सेवा करने में ही मुझे आनंद है। अगर वह ज़बरदस्ती मर जाएगी तो मैं भी मर जाऊँगा। कृपया यह बात उसे समझा दीजिये।"

योगी का दिया हुआ प्रसाद उस युवती को देकर, उस दंपति के कष्टों को दूर करने की इच्छा कांतिवर्मा के मन में पैदा हुई। उसने अपने हाथ का केला उस युवती को देते हुए कहा–"पहले यह केला खाओ। बाद तुमको उचित सलाह देता हूँ।"

युवती ने केला खाया। तुरंत उसे लगा कि उसमें कोई बड़ा परिवर्तन आ गया है। वह झट उठ खड़ी हुई और अपने दोनों हाथ उठाकर कांतिवर्मा को नमस्कार किया। उस युवती के पति के आनंद की कोई सीमा न थी।

"तुम लोगों की तकलीफ़ें दूर हो गयीं, अब तुम चले जाओ।" यह कहते कांतिवर्मा ने उन्हें भेज दिया और घर की राह ली। इस बात का उसे ज़रूर दुख था कि वह जिस काम के लिए गया था, वह पूरा न हो सका। लेकिन इस बात का संतोष था कि एक लड़की का लंगड़ापन दूर हो जाए और दूसरी लड़की का बना रहे, यह उसे कतई पसंद न था। इससे उसे दुख ही होता। इसके अलावा एक परिवार उसके कारण सुखी बन सका।

यह सोचते जब वह घर पहुँचा, तब ग्यारह साल की दोनों लड़कियाँ दौड़ते हुए कांतिवर्मा के सामने आ गयीं। उस समय कांतिवर्मा को जो आश्चर्य और आनंद हुआ, उसका वर्णन करना कठिन है!
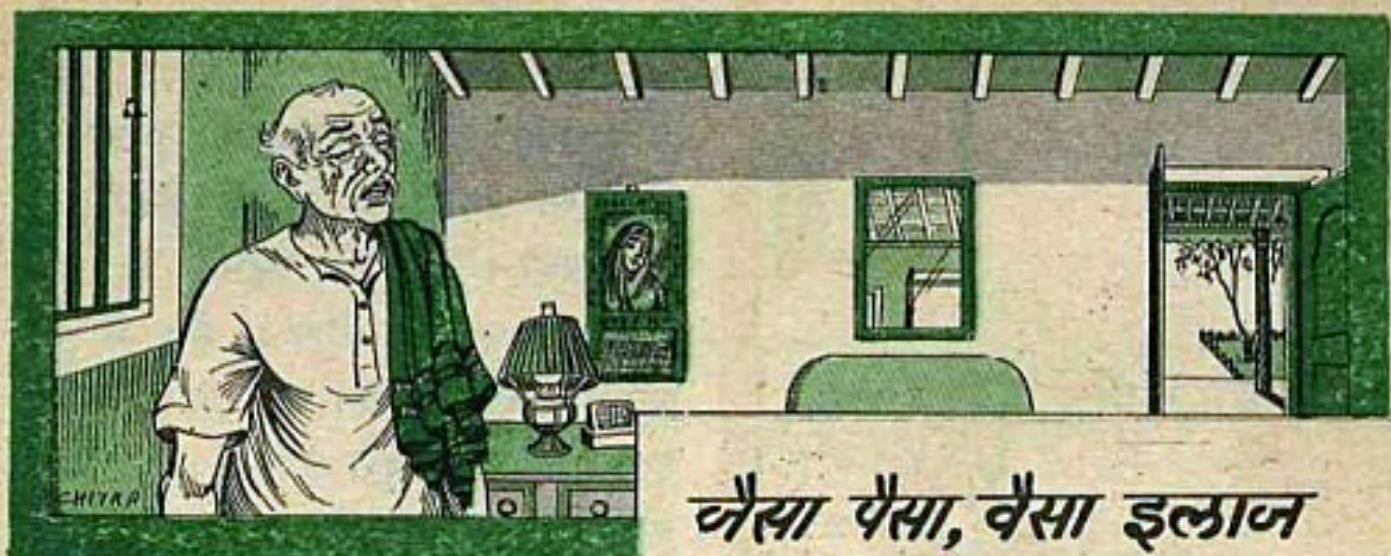
# जैसा पैसा, वैसा इलाज

एक गाँव में कनकदास नामक एक धनी था। अड़ोस-पड़ोस के गाँवों में उसके बराबर कोई धनी न था। लेकिन वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। किसीको सामने मरते देखकर भी एक दाना देने को तैयार न होनेवाला था।

कंजूस कनकदास को आँखों की बीमारी आयी। आँखों से पानी गिरने लगा था, सर-दर्द होता था और उसकी दृष्टि भी मंद हो गयी थी। वह इलाज तो कराना चाहता था, लेकिन रुपये के खर्च हो जाने के डर से सहता गया। आखिर सब के समझाने पर वह इलाज कराने को राजी हो गया।

पड़ोसी गाँव में एक बड़ा वैद्य था। कहा जाता था कि उसकी दवा राम-बाण-जैसी थी। उसका नाम इतना फैल गया था कि आसपास के गाँवों में कोई वैद्य न रह सका।

उस वैद्य का एक अच्छा गुण था। वह रोगी का हाल-चाल सब जानकर तब दवा देता; पैसे भी रोगी की शक्ति के अनुसार वसूल करता। ग़रीबों को कम क़ीमत की दवा देता, वे जो भी देते, ले लेता।

कंजूस कनकदास उस वैद्य से नाराज़ था। एक बार उसने उस वैद्य से इलाज कराया था। बदले में वैद्य ने सौ रुपये ऐंठ लिये थे।

अब कनकदास की बीमारी का इलाज उसी वैद्य से कराना होगा। क्योंकि कई कोसों दूर तक दूसरा वैद्य नहीं था। इस वैद्य से इलाज कराने से बड़ी रक़म देनी होगी।

इसलिए कनकदास सोचता रहा कि क्या किया जाय। सोचते-सोचते उसके दिमाग़ में एक बढ़िया विचार आया। तुरंत उसने उसे कार्य रूप देना चाहा। फिर उस ने

भुवन कुमार

एक गरीब का वेष धारण कर वैद्य से इलाज पाना चाहा। उसने एक फटा-पुराना कपड़ा पहना, सर पर एक चीथड़ा लपेटा, तांबूल में एक चवन्नी रखकर वैद्य के घर गया, अपने वेश के अनुसार बोली बदलकर बीमारी की हालत बतलायी और इलाज करने की प्रार्थना की।

"मैं तुम्हारी बीमारी का इलाज करूँगा, चिन्ता न करो। लेकिन मेरे कहे मुताबिक़ करो। चार मूली लाओ; उन्हें काटकर नमक में मिला दो; उसका पानी निकल आएगा; उस पानी में हींग मिलाकर पी लो; बाद को मूली के टुकड़े को धूप में सुखाकर रात में खाया करो; चालीस दिन ऐसा करोगे तो तुम्हारी बीमारी दूर हो जाएगी।" वैद्य ने कहा।

कनकदास घर लौटा। वैद्य के कहे अनुसार चालीस दिन तक किया। यह इलाज उसे बहुत बुरा लगा। हींग, मूली और नमक ये सब बढ़िया भोजन करनेवाले को खराब ही लगते हैं। फिर भी चालीस दिन तक आँख मूँदकर कनकदास ने यह सब खाया। उसकी बीमारी तो दूर हो गयी। लेकिन उसकी जीभ की रुचि जाती रही।

इलाज के पूरे होते ही कनकदास ने बढ़िया लड्डू बनवा लिये और हद् से ज़्यादा खा डाला। उसके मुँह का जायका चला गया था। खाते समय अपनी जीभ पर नियंत्रण नहीं रखा। इससे उसे बदहज़मी, प्यास, अग्निमांद्य और पेट-दर्द शुरू हो गये।

कनकदास फिर पुराना वेष धारण कर तांबूल में चवन्नी लिये वैद्य के पास गया। उसे सुनाया कि पुरानी बीमारी दूर हो गयी, नयी बीमारी सता रही है, उसका भी इलाज करने की कृपा कीजिये।

वैद्य ने कनकदास की नाड़ी की जाँच की और कहा—"तुम्हें बदहज़मी हो गयी

है। यह बताओ कि तुमने क्या खाया है? यह मालूम होने पर ही मैं दवा दे सकता हूँ।"

"लड्डू खाये हैं जी।" कनकदास ने कहा।

"इस तरह की बदहजमी होनी हो तो बहुत-से लड्डू खाये होंगे। इतने लड्डू तुम्हें कहाँ से मिले?" वैद्य ने पूछा।

कनकदास ने बात बदलने के विचार से कहा—"ओह! पेट में दर्द हो रहा है, परेशान हूँ। पहले दवा दीजिये, बाद को सब बता दूँगा।"

"तुमको इतने लडडू खिलानेवाला जरूर कोई अमीर ही होगा। पहले उसका नाम बता दो, तब तक मैं दवा नहीं दूँगा। जिसके कारण तुम्हें बीमारी हुई उसीको दवा का खर्च भी देना होगा।" वैद्य ने कहा।

"कनकदास ने खिलाये हैं। मैं उनका नौकर हूँ। बहुत दिन बाद कल उन्हें देखने गया। उन्होंने लड्डू दिये। लोभ में पड़कर मैंने खा डाला।"

"और क्या? दवा के लिए पचास रुपया भी उसीसे ले आओ। इस बीच मैं दवा बनाकर तैयार रखूंगा।" वैद्य ने कहा।

"यह कैसे हो सकता है? उन्होंने लड्डू दिये हैं! फिर उनसे इलाज का खर्च भी माँगूं, यह ठीक न होगा। यह मुझसे नहीं हो सकता! कनकदास ने कहा।

"तुमसे न हो सकता तो मैं ही माँग कर ले लूंगा। आज मुझे कनकदास के गाँव में जाने का काम भी आ पड़ा है।" यह कहते वैद्य ने कोई चूर्ण कनकदास के मुंह में डाल दिया और थोड़ा-सा पानी पिलाकर कहा—"तुम्हारी बीमारी ठीक हो जाएगी, अब तुम जा सकते हो।"

कनकदास के मूंह में जलन-सी हुई। उसकी जीभ छटपटायी। आँखें चकरा

गयीं, कान बहरे-से लगे। जल्दी-जल्दी घर पहुँचकर कनकदास ने जीभ में कोई मीठी चीज़ डालनी चाही। लेकिन कुछ दूर जाने के बाद वह चल नहीं पाया और एक पेड़ के नीचे लुढ़ककर हाँफने लगा।

इस बीच में वैद्य कनकदास का घर पहुँच गया और दर्याफ़्त किया। उसको मालूम हुआ कि कनकदास बाहर गया है और जल्द लौट आएगा। वैद्य उसका इंतज़ार करने लगा।

थोड़ी देर बाद कनकदास हाँफते घर पहुँचा, वैद्य को देख घबराये हुए स्वर में बोला–"ओह! आप हैं!" यह कहते एक कुर्सी पर बैठ गया।

वैद्य ने उसे देखकर कहा–"मैं पहले से ही सन्देह करता था। आपकी जो बीमारी है, मेहनत करनेवालों को नहीं होती। आलसी लोगों में ही यह बीमारी फैलती है। फिर भी मैंने उतना ध्यान न दिया और आप का इलाज कर दिया। जब आँख की बीमारी लेकर मेरे पास आये तब मैंने आपको ग़रीब समझकर ही देहाती दवा दिलायी। आप-जैसे लोगों के लिए वैसी दवा काम न देगी। कोई स्वादिष्ठ लेह्य या सुगंधित लेप अथवा तैल का उपयोग किया जा सकता है। बदहज़मी के लिए भी यही असली बात है। आप पैसे का ख़्याल न कीजिये। बढ़िया दवाएँ हैं। मीठी बीमारियों के लिए मीठी दवाएँ हैं! उन दवाइयों के खाने से न आपके मुँह का स्वाद जाता रहता है और न खाने में आपको तक़लीफ़ होती है। उल्टे खाने के बाद तबीयत इतनी अच्छी हो जाती है। फिर बिगड़ने का डर नहीं रहता है।"

कनकदास का वैद्य ने अच्छी दवाएँ देकर इलाज किया और ख़ूब पैसे भी वसूल किये।
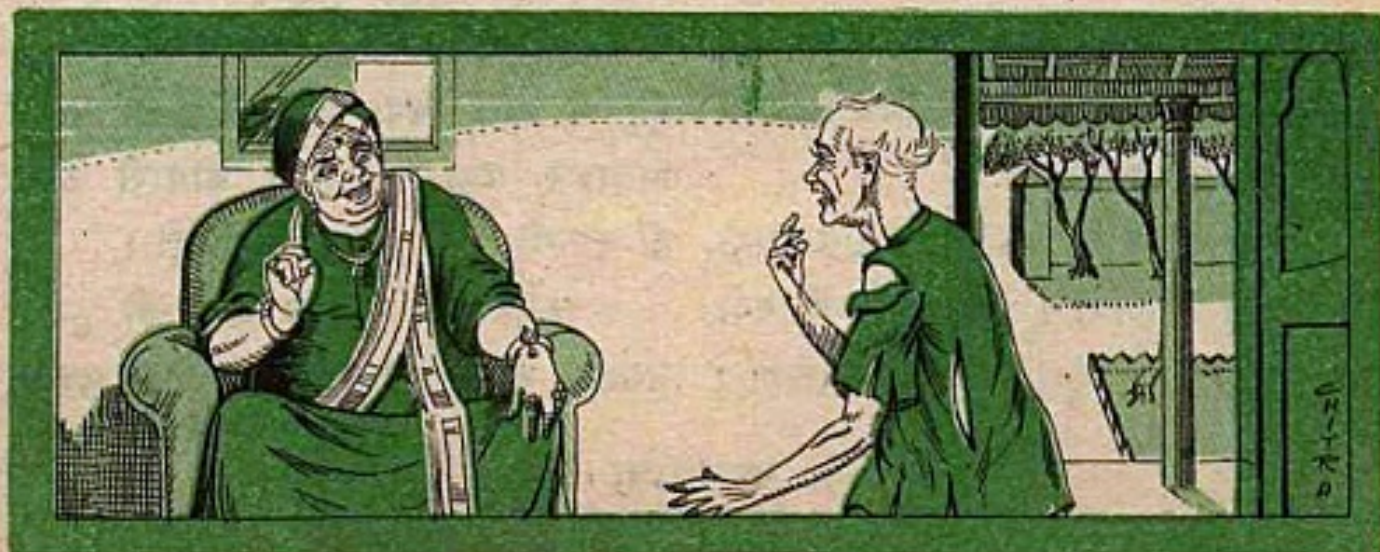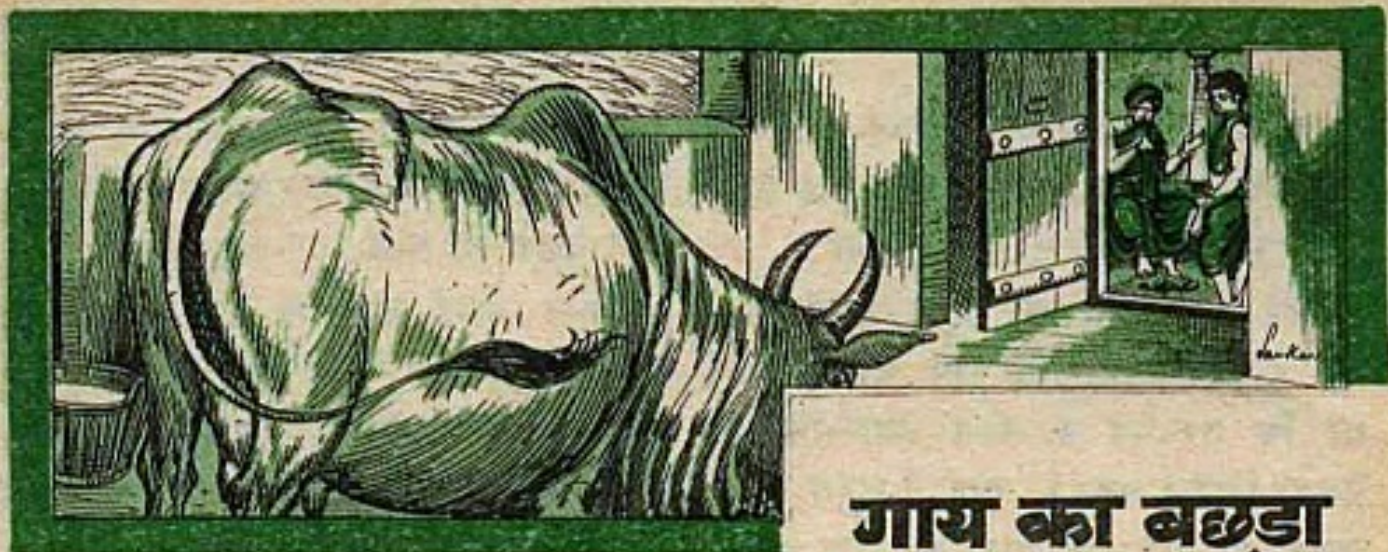
# गाय का बछड़ा

एक गाँव में दयानिधि नामक एक ग़रीब गृहस्थ था। उसके पास थोड़ी-सी ज़मीन और एक गाय थी। उससे गृहस्थी चलाना बड़ा मुश्किल मालूम होता था।

गरमी के दिन थे। एक मुसाफ़िर कहीं से दयानिधि के घर आया। बाहर चबूतरे पर लुढ़क पड़ा। थोड़ा आराम करने के बाद उसने पानी मांगा। दयानिधि ने उसे मट्ठा दिया और शाम तक अपने घर में आराम करने को कहा।

बातचीत से दयानिधि की ग़रीबी की बात प्रकट हो गयी।

"मेरी गाय एक महीने के अन्दर बछड़ा देनेवाली है। अच्छा दाम मिले तो मैं उसे बेचना चाहता हूँ। मैं इस हालत में उसे पाल नहीं पाता हूँ।" दयानिधि ने कहा।

आगंतुक ने गाय की जाँच की और दयानिधि को सलाह दी-"इस गाय के लक्षण बड़े ही अच्छे हैं। इसके घर में रहने से तुम्हारा भला होगा। तुम किसी भी हालत में इसे न बेचो।"

दयानिधि ने उसकी सलाह पर यक़ीन किया और गाय को बेचने की बात भूल गया। एक महीने बाद गाय ने एक बछड़ा दिया और वह मर गयी।

दयानिधि गाय को पहले ही न बेचने पर दुखी न हुआ। वह बछड़े को अपने बच्चे की तरह बड़े प्रेम से पालता रहा। एक दिन दयानिधि जब घर पर न था, वह बछड़ा रस्सा तोड़कर भाग गया और शाम के होते-होते एक जंगल में फँस गया।

पिछली रात को राजमहल में एक चोरी हो गयी थी। बड़ी क़ीमती चीज़ें चोर उठाकर भाग गया था। चोर दिन-भर जंगल में छिपा रहा, और रात के होते

जगपति मिश्र

ही चोरी का माल गठरी बाँधकर सर पर रख ली। जंगल को पार करके वह दूसरे राज्य में जाने के लिए रवाना हुआ।

सर पर गठरी का बोझ भारी था। वह हाँफते गठरी को ढोये जा ही रहा था कि एक पेड़ के नीचे दयानिधि का बछड़ा दिखाई पड़ा। चोर ने तुरंत गठरी बछड़े की पीठ पर बांध दी और उसके गले में एक रस्सी डाल खींचकर ले जाने लगा। बछड़ा रंभाने लगा।

इस बीच दयानिधि घर लौटा तो उसे मालूम हुआ कि बछड़ा रस्सा तोड़ भाग गया है। वह दो-तीन आदमियों के साथ दो लालटेन लेकर बछड़े को ढूंढ़ते उसी जंगल में आया। जब वे जंगल में पहुँचे, तब थोड़ी देर बाद उन्हें बछड़े के रंभाने की आवाज़ सुनाई दी।

"मिल गये हो, बेटा! ठहरो, अभी आया।" दयानिधि चिल्ला उठा।

चोर ने उसकी चिल्लाहट सुन ली। दो-चार आदमियों को देख डर के मारे गठरी और बछड़े को छोड़ भाग खड़ा हुआ।

अपने बछड़े की पीठ पर गठरी देख दयानिधि अचरज में आ गया। बछड़े को हाँककर घर पहुँचा। गठरी खोलकर देखा, तो उसमें सोने और हीरे के गहने दिखाई दिये। दयानिधि ने सोचा कि ये गहने राज-महल के ही हो सकते हैं।

सुबह के होते ही दयानिधि ने वह गठरी राजमहल मे पहुँचा दी और राजा को सारी कहानी कह सुनायी।

राजा बहुत खुश हो गया। जब उसे मालूम हुआ कि दयानिधि ग़रीब है, तब उसको और उसके साथ जंगल में गये आदमियों को अच्छे इनाम दिये।

बछड़े को पालने के लिए राजा ने दयानिधि को चार एकड़ बढ़िया ज़मीन दान दी। वह आराम से रहने लगा।

# कृष्णावतार

कृष्ण के द्वारा प्रारंभ किया हुआ यज्ञ समाप्त हो गया। कई हज़ार ब्राह्मणों को भोज दिया गया। अर्जुन, सात्यकी इत्यादि अपने निकट पचास बंधुओं के साथ कृष्ण ने बड़े स्नेह से भोजन किया। तदनंतर सब सभा-भवन में पहुँचे। वहाँ पर जब मनोविनोद की बातें हो रही थीं, तब अर्जुन ने कृष्ण से पूछा—"हम जानना चाहते हैं कि उस ब्राह्मण के लड़के क्या हुए? कौन उनको उठा ले गया? कहाँ पर छिपाया?"

"समस्त सृष्टि के मूल कारक परमेश्वर ने मुझे देखना चाहा। इस कार्य को संपन्न करने के लिए वे ब्राह्मण के बालकों को अदृश्य करा देते थे। वे जानते हैं कि मैं ब्राह्मण के कार्य की उपेक्षा नहीं करता। उनकी इच्छा की पूर्ति करने के लिए समुद्र के मध्य में तथा पहाड़ों में भी मुझे मार्ग बनाकर जाना पड़ा।"

इसके बाद अर्जुन वहाँ से अपने नगर को लौट गया। वहाँ पर युधिष्ठिर को यहाँ की सारी बातें बतायीं जिससे युधिष्ठिर को अपार संतोष हुआ।

एक दिन रुक्मिणी देवी ने कृष्ण से कहा—"मैंने प्रद्युम्न जैसे पुत्रों का जन्म दिया है। लेकिन मेरी संतान की कामना अभी तक पूरी नहीं हुई। मेरी इच्छा है कि आप जैसे एक पुत्र को और जन्म दूँ।"

"शंकरजी की आराधना करके मैं एक और पुत्र का जन्म दूंगा। तपस्या के

२२. कृष्ण की कैलास-यात्रा

"मैंने अपने सभी शत्रुओं का वध किया है। लेकिन एक और बचा है! वह साधारण शत्रु नहीं है। बड़ा साहसी और पराक्रमी भी। वह मुझसे जलता है। उसका नाम पौंड्रु है। उससे मैं डरता भी हूँ। उसको मारने पर ही मैं कह सकता हूँ कि सचमुच मेरी विजय हुई है। इस समय मुझे कैलास की यात्रा करनी पड़ रही है। मेरे जाते ही पौंड्रु आकर हमारे नगर पर हमला करेगा। वह अकेला दुनिया में यादव वंश को नाश करने की ताक़त रखनेवाला है। इसलिए मेरे लौट आने तक आप लोग दिन-रात बड़ी सावधानी से हमारे नगर की रक्षा कीजिये। नगर के सभी दरवाजों पर कड़ी निगरानी रखवाइये, और पहरे का प्रबंध कीजिये। इस बात का ख्याल रखिये कि अनुमति के बिना कोई भीतर-बाहर आ-जा न सके। चतुरंगी सेना को सदा तैयार रखिये। अस्त्र-शस्त्रों को सन्नद्ध रखिये। सभी दिशाओं की ठीक से रक्षा कीजिये।"

तदनंतर कृष्ण ने सात्यकी से कहा– "इस नगर की रक्षा का भार मुख्यतः तुमपर रख रहा हूँ। यादवों की सारी

द्वारा प्राप्त न होनेवाली कोई वस्तु नहीं है। हिमालयों में जाकर शंकरजी को प्रणाम करूँगा, साथ ही मार्ग मध्य में स्थित बदरी-वन में रहनेवाले महा तपस्वियों को भी देख सकूँगा। इससे कई हित होंगे। इसलिए मैं कैलास की यात्रा कर आऊँगा।" कृष्ण ने कहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल कृष्ण ने कालकृत्यों के समाप्त होने के बाद बलराम, सात्यकी, उग्रसेन, कृतवर्मा, उद्धव तथा अन्यान्य प्रमुख व्यक्तियों को सभा-भवन में तुरंत उपस्थित होने का समाचार भेजा। सबके आने के बाद कृष्ण ने उन लोगों से कहा–

संपत्ति का तुम्हीं को रक्षक के रूप में नियुक्त कर रहा हूँ। तुम अपने कर्तव्य के पालन में सावधान रहो।"

"आपकी आज्ञा और बलरामजी का समर्थन प्राप्त हो तो कौन ऐसा काम है जो मैं नहीं कर सकता? पौंड्रु क्या? इन्द्र भी समस्त दिक्पालकों और देवताओं को साथ लेकर आवे तब भी मैं परवाह नहीं करूँगा।" सात्यकी ने कहा।

फिर कृष्ण ने उद्धव से कहा-"गुरुवर! आप बुद्धि में बृहस्पती हैं। मुझे आपसे कुछ कहना नहीं है। आप अपनी बुद्धि के बल पर साहसी यादव वीरों का मार्गदर्शन कीजिये।" इसी भांति कृष्ण ने बलराम, उग्रसेन तथा अन्य यादव प्रमुखों को सावधान किया और गरुड़ का स्मरण किया। तुरन्त गरुड़ उड़ते हुए आ पहुँचा। कृष्ण ने गरुड़ से कहा कि मुझे कैलास जाना है। उसके बाद उसकी पीठ पर सवार हो गये। कृष्ण के साथ गरुड़ आकाश में ऊपर उठा और ईशान-दिशा की ओर रवाना हुआ।

रास्ते में कृष्ण बदरीवन में उतरे। वहाँ के मुनियों ने उनका बड़ा अच्छा स्वागत किया। मुनियों का आतिथ्य

स्वीकार कर कृष्ण रात को वहीं रहें। अर्द्धरात्रि के समय उनके मन में इच्छा हुई कि उस सारे प्रदेश का संचार करे। बड़ी देर तक बदरी-वन में संचार करते रहें। फिर एक मनोहर प्रदेश में पहुँचे। वहाँ स्वस्तिक-आसन लगाकर, समाधियोग में लीन हुए।

उस समय कई हज़ारों की संख्या में पिशाच मृगों का पीछा करते उधर आ निकले। उनके नेता घंटाकर्ण और उसके भाई थे। वे दोनों कृष्ण के पास आ पहुँचे और पूछा-"तुम कौन हो? महाशय! देखने में कोमल हो! इस

वन में क्यों रहते हो? तुम राक्षस हो, या देवता हो?"

"मैं यदुवंशी क्षत्रिय हूँ। दुष्टों का संहार करना और शिष्ट-जनों की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। शंकरजी को देखने के लिए मैं कैलास जा रहा हूँ। तुम लोग कौन हो? यह साधु-जनों का प्रदेश है। यहाँ पर मृगों की भी हिंसा नहीं करनी चाहिए। तुम मृगों का शिकार करते यहाँ पर आते हो तो मैं सहन नहीं कर सकता।" कृष्ण ने कहा।

इसपर घंटाकर्ण ने जवाब दिया—"मेरा नाम घंटाकर्ण है। यह मेरा भाई है। मैं विष्णु का भक्त हूँ। यह मेरी सेना है। मैं कुबेर का सेवक हूँ। विष्णु की पूजा के लिए ही हम मृगों का शिकार करते हैं। इसीलिए हम इसको हिंसा नहीं कह सकते! एक बात और सुनिये, मेरे आराध्य देव वसुदेव के पुत्र के रूप में जन्म लेकर द्वारका में निवास करते हैं। मैं उनके दर्शन के लिए सेना समेत रवाना हो चुका हूँ।"

इसके बाद वह कृष्ण के पास ही अंतड़ियाँ बिछाकर बैठ गया। हाथ जोड़कर अपने आराध्य देव का ध्यान करने लगा। उसको देखते हुए कृष्ण को बड़ा आनंद आया। वह उन्हीं का भक्त है, लेकिन पिशाच के काम करता है। घंटाकर्ण आँख मूँदकर जब ध्यान करने लगा तब कृष्ण ने उसके मनोनेत्र में अपने स्वरूप को दर्शाया। उसने आँख खोलकर देखा तो वही रूप सामने था। वह उठकर अतिशय आनंद के साथ नाचते हुए चिल्ला उठा—"मैंने कृष्ण को देखा है, विष्णु को देखा है।" कृष्ण की अनेक प्रकार से प्रार्थना की। इसके बाद अपने शूल में चुभोये हुए एक शव को निकालकर उसके दो टुकड़े कर दिये और बोला—
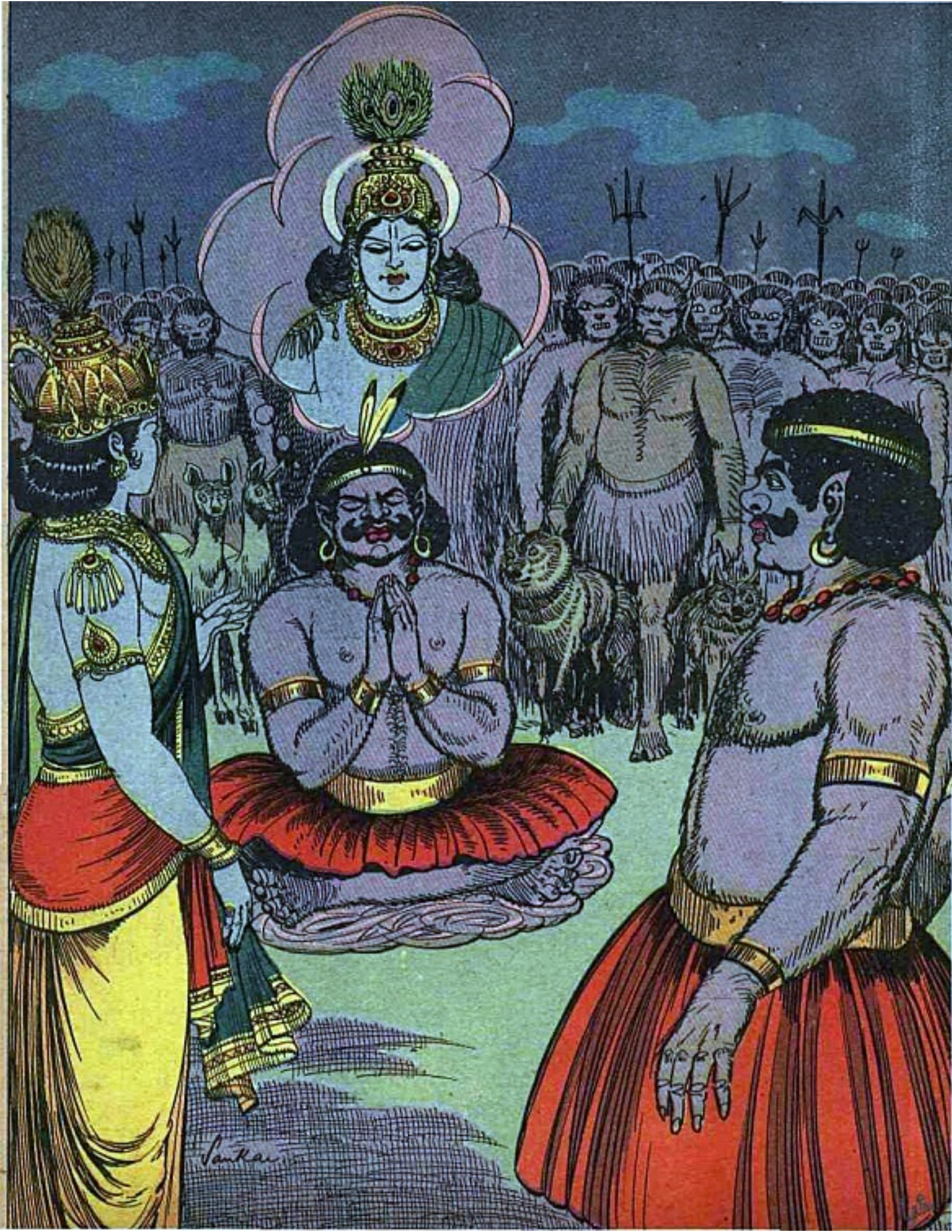
"यह एक पवित्र ब्राह्मण का शव है। मैं भक्ति और श्रद्धा के साथ आपको समर्पित करता हूँ। लीजिये!"

कृष्ण को उसपर दया आयी। उन्होंने घंटाकर्ण से कहा—"देखो, बेटा! मुझ-जैसे लोग लाश का स्पर्श नहीं करते! ऐसी पूजाओं से मैं घृणा करता हूँ। मामूली पिशाचों के करनेवाले ये काम तुम-जैसे बड़े आदमियों के लिए शोभा नहीं देते! तुम हमेशा मेरा ही ध्यान किया करते हो, इसलिए मैं तुमको उत्तम लोक प्रदान करता हूँ।" यह कहकर कृष्ण ने घंटाकर्ण के शरीर का स्पर्श किया। स्पर्शवेदी के छूने से जैसे लोहा सोना हो जाता है, उसी भांति कृष्ण के हाथ के लगते ही वह भयंकर पिशाच देवता के रूप में बदल गया।

जल्द ही रात बीत गयी। सूर्योदय भी हुआ। कृष्ण ने गंगाजी में स्नान किया। बदरीवन में मुनियों से विदा लेकर गरुड़ वाहन पर सवार हो कैलास के लिए रवाना हुए। कैलास पर पहुँचते ही कृष्ण ने उस पर्वत पर सभी विवरण देखे। शिवजी के कार्यों का स्मरण करते कृष्ण बहुत प्रसन्न हुए!

मानस सरोवर के पास पहुँचकर कृष्ण अपने वाहन से उतरे। वहाँ के मुनियों का परिचय पाकर, १२ वर्ष तक तपस्या करने का कृष्ण ने निश्चय किया। फाल्गुण मास में दीक्षा लेकर कंद-मूल खाते बारह वर्ष तपस्या की। बारह वर्ष समाप्त हुए। अंतिम दिन इंद्र और अन्य देवता कृष्ण को देखने आये। उन लोगों को पता न चला कि कृष्ण ने किस कार्य की सिद्धि के लिए ऐसी घोर तपस्या की है।

दूसरे दिन वृषभ वाहन पर पार्वती के साथ शिवजी आ पहुँचे। उनके पीछे

पुष्पक विमान पर कुबेर, अपने वाहनों पर विघ्नेश्वर और कुमारस्वामी तथा उन के आगे आयुध धारण कर नन्दी, महाकाल, पीछे भूतगण भी आ पहुँचे। वे सब गाने, नाचने लगे।

दूर से ही कृष्ण ने देखा। उनके देखते ही शिवजी पार्वती के साथ वृषभ वाहन से उतरे। कृष्ण भी शिवजी को दूर से देखते ही अपने आसन से उठे। सामने आकर भक्ति के साथ सर नवा कर नमस्कार किया और शिवजी के सामने खड़े हुए। उस समय वहाँ पर उपस्थित सब देवताओं ने शिव और केशव को एक साथ देखकर सोचा कि उनके जन्म धन्य हो गये हैं।

कृष्ण ने शिवजी को साष्टांग प्रणाम करके उनकी प्रशंसा की। शिवजी ने बहुत ही प्रसन्न होकर, कृष्ण के हाथ को अपने हाथ में लेकर यों कहा–

"कृष्ण, इसके पूर्व ही आपने तपस्या करके मेरे द्वारा वरदान के रूप में एक पुत्र को पाया है। मैंने कृतयुग में कई सौ वर्षों तक एक संकल्प की सिद्धि के लिए बड़ी निष्ठा के साथ तपस्या की थी। तब मेरी परिचर्या करने के निमित्त हिमवान ने अपनी वयस्क कन्या और उस

की परिचारिकाओं को मुझे सौंप दिया। मैंने भी उनको स्वीकार किया। उस वक़्त हम दोनों को मिलाने की इच्छा से इंद्र ने मन्मथ को प्रेरित किया। मन्मथ मुझपर हमला कर बैठा। जब मैं समाधि से बाहर आनेवाला था, तब मौक़ा देखकर उसने मेरे हृदय पर सम्मोहन अस्त्र का प्रयोग किया। तुरंत मुझमें विकार पैदा हुआ और मैंने पार्वती की ओर देखा। वह पुलकित शरीर के साथ मुझे बहुत ही सुंदर दिखाई दी। मैंने यह सोचते हुए चारों तरफ़ दृष्टि प्रसारित की कि क्यों ऐसा हुआ है। अपने सभी आयुधों का मुझपर प्रयोग करने के लिए खड़ा मन्मथ मुझे दिखाई दिया। मैं सोच ही रहा था कि ऐसे दुष्ट का वध करूँ तो क्या हानि है, मेरे फालनेत्र से अग्नि पैदा हुई। आकाश पर देवता चिल्ला ही रहे थे कि मन्मथ को दण्ड न दीजिये, उसपर कुपित न होइये, लेकिन आग की लपटों ने मन्मथ के चारों तरफ़ फैलकर उसको भस्म कर डला। इसके बाद ब्रह्मा वग़ैरह देवताओं ने आकर मुझसे कहा कि मन्मथ तीनों लोकों की भलाई करने-वाला है। तब मैंने ब्रह्मा की इच्छा के अनुसार मन्मथ को आपके पुत्र के रूप में निश्चय किया, वही प्रद्युम्न है। आप और रुक्मिणी की पहली संतान है। इस वक़्त आपने जो तपस्या की, उसके फल के रूप में आपने पहले ही पुत्र को पा लिया है।"

इसके बाद शिवजी ने वहाँ पर उपस्थित मुनि इत्यादि लोगों का परामर्श किया और उनको सलाह दी कि वे कृष्ण को श्रीमन्नारायण मानकर उनकी पूजा करें। तदनंतर वे अंतर्धान हुए। उनके साथ ही पार्वती, नन्दी और प्रथम गण भी अदृश्य हुए। कृष्ण भी वहाँ से बदरी-वन को लौटे।

# अरण्य पुराण

[ २५ ]

मौवली छेद से रेंग कर बाहर जाने लगा, तब सफ़ेद फन यह चिल्लाते–"वह मौत है! मौत!" मूर्तियों को काटने लगा।

जब कावा और मौवली फिर अरण्य में पहुँचे तब उनकी जान में जान आ गयी। सवेरे की सूरज की किरणों में मौवली अंकुश को चमकानेवाले ढंग से घुमाते बड़ा खुश हुआ।

धूप में चमकनेवाले लाल मणि को देख वह बोल उठा–"यह तो बाघीर की आँख से भी ज्यादा अच्छा चमकता है; इसे उसको दिखाना है, लेकिन सफ़ेद फन ने मौत की बात क्यों कही?"

"मैं क्या जानूँ? मेरी चिंता बस यही रही कि तुमने उसे मार क्यों न डाला?... आज शिकार खेलने जायेंगे, चलोगे?" कावा ने पूछा।

"नहीं, इसे बाघीर को दिखाना है... शियार भी चलेगा!" यह कहते मौवली दौड़ पड़ा और अपने हाथ के अंकुश को देख दौड़ते बाघीरवाले अरण्य में जा पहुँचा।

बाघीर तभी भर पेट खाकर पानी पीते दिखाई पड़ा। मौवली अपने अनुभवों को रोचक ढंग से सुनाता था और बाघीर सर हिलाते सुनते अंकुश की गंध लेने लगा। सफ़ेद फन की कही हुई आखिरी बात का बाघीर ने समर्थन किया। इस पर मौवली ने पूछा–"तब तो सफ़ेद फन का कहना सच मानते हो?"

"भाई, मैं उदयपुर के राजा के पिंजड़े में पैदा हुआ हूँ। मुझे मानवों की सारी बातें मालूम हैं। उस लाल मणि के वास्ते एक ही रात में तीन तीन हत्याएँ करने वाले कई आदमी हैं।" बाघीर ने कहा।

देते हैं और अपनी इच्छा के अनुसार हाथियों को चलाते हैं। मानव के पास नख और नुकीले दांत नहीं हैं। इसलिए ऐसी चीज़ें बना लेता है!" बाघीर ने कहा।

"छी छी! मानवों की भीड़ की हर चीज खून पैदा करनेवाली है। यह बात पहले मालूम होती तो मैं इसे नहीं लाता!" यह कहते मौवली ने अंकुश को दूर फेंक दिया। वह तीस गज की दूर पर जाकर ज़मीन में चुभ गया। उसने ओस से भीगी घास से अपने हाथों को मलते कहा—"पिंड छूट गया। उस बूढ़े सफ़ेद फन ने कहा था कि मैं मर जाऊँगा! कमबख्त कहीं का! अब देखूंगा, कैसे मरता हूँ।"

"मैं भी जानता हूँ कि करने को सामने काम न पड़ा हो तो मनुष्य खून ही करते हैं। यह लाल मणि तो खाया भी नहीं जा सकता। इस के वास्ते खून करना क्यों?" मौवली ने कहा।

"मौवली तुम आराम से सो जाओ। तुम मानवों की भीड़ में रहे, लेकिन फ़ायदा ही क्या रहा?" झपकियां लेते बाघीर बोला।

"इस कांटेदार चीज से फ़ायदा ही क्या?" मौवली ने फिर पूछा।

"मनुष्यों के लिए फ़ायदेमंद है। वे लोग हाथी की संतान के माथे पर चुभो

"रात-भर शिकार करके दिन-भर बकते रहना मुझसे नहीं होता! मैं सो जाता हूँ, भैया!" अपने स्थान की ओर रवाना होते बाघीर बोला!

मौवली एक अच्छे पेड़ पर जा बैठा। उस पर फैली लताओं का झूला बना कर सो गया। नींद में उसने उस लालमणि के सपने देखें। जब वह जाग पड़ा, तब अंधेरा फैल रहा था। मर्कट पेड़ पर जोर जोर से चिल्ला रहे थे!

"अंकुश को फिर एक बार देखूंगा!" यह सोचते लताओं को पकड़ मौवली नीचे उतर आया। उसे देखा, बाघीर किसी चीज़ को ढूंढते चक्कर काट रहा है!

"वह अंकुश कहाँ है?" मौवली ने पूछा! "कोई आदमी उठा ले गया है। देखो, उसके पैरों के चिह्न हैं!" बाघीर बोला।

"सफ़ेद फन का कहना सच हो तो उस आदमी को मरना होगा, चलो, पैरों के निशान देखकर चलें!" मौवली बोला।

"अरे, निशान तो होंगे ही, कहीं जाएँगे थोड़े ही। पहले पेट भर लें!" बाघीर ने कहा।

जल्द ही उनको खाना मिला। दोनों ने भर पेट खाया-पिया, तब पैरों के चिह्न देखते आगे बढे! वह चिह्नवाला आदमी थोड़ी दूर चलकर गया। फिर दौड़ कर एक ओर मुड़ गया था। उस जगह पर एक और आदमी के पैरों के निशान दिखाई पड़े। दूसरे आदमी के पैरों के निशान छोटे थे और उसकी उंगलियाँ भीतर की ओर मुड़ी हुई थीं। मौवली को समझते देर न लगी कि ये निशान भील शिकारी के हैं।

दो जोड़े पैरों के निशानों में मौवली छोटे पैरों के निशान देखते बढ़ा और बाघीर बड़े पैरों के निशान।

आखिर दोनें के पैरों के निशान एक साथ मिल गये थे। उस रास्ते पर एक देहाती की लाश दिखाई दी। पीठ की ओर कलेजे तक भील शिकारी का बाण धँस गया था।

"एक मौत! लेकिन अंकुश कहाँ?" मौवली ने पूछा।

"भील शिकार ले गया होगा।" यह कहते बाघीर छोटे पैरों के निशानों को ढूंढते आगे बढ़ा। थोड़ी दूर और जाने

पर एक अलाव के सामने भील शिकारी की लाश मिली। दूसरी मौत है! वहीं पर जूतोंवाले चार आदमियों के पैरों के निशान दिखायी दिये। मौवली की ओर आगे बढ़ने की इच्छा न हुई। परंतु बाघीर ने पीछे लौटना शिकारी का अपमान बताया। इसलिए लाचार हो मौवली भी आगे बढ़ा।

चारों के निशान ढूंढते एक घंटा और चलते रहें। वहाँ पर बाघीर को धुएँ की गंध आयी। पास में ही झाड़ी में बाघीर को एक और लाश दिखाई दी। उसको किसीने पीट कर मार डाला था। भील शिकारी की ही हालत इसकी भी हुई थी।

आध मील चलने के बाद उसको बुझा हुआ अलाव और उसकी बगल में तीन लाशें दिखाई पड़ीं। किसी के शरीर पर कोई घाव न था। मौवली ने पूछा—"ये लोग कैसे मरे?"

"ज़हर से!" बाघीर ने कहा। उनके हाथों में जो मरा था, वह रसोइया था। उसने पहले ही और लोगों के खाने में ज़हर मिलाया था। अंकुश अलाव के पास ही पड़ा था।

मौलवी इस बात के लिए पछताने लगा कि वह अंकुश को खंडहरों से नाहक़ क्यों ले आया है। उस ने दो दिनों के लिए अंकुश को एक जगह गाड़ दिया। फिर रात के वक़्त उसे सफ़ेद फन के स्थान पर ले जा कर छेद में से भीतर फेंक दिया और बोला—"सर्प पितामह, किसी अच्छे युवक को इस खज़ाने की रक्षा के लिए ले आओ! यह भी ख्याल रखो कि कोई भीतर आया तो जान से न लौटे!"

"ओहो, अंकुश फिर वापस आ गया? तुम अभी तक ज़िंदा हो? कैसा आश्चर्य है!" सफ़ेद फन ने कहा।
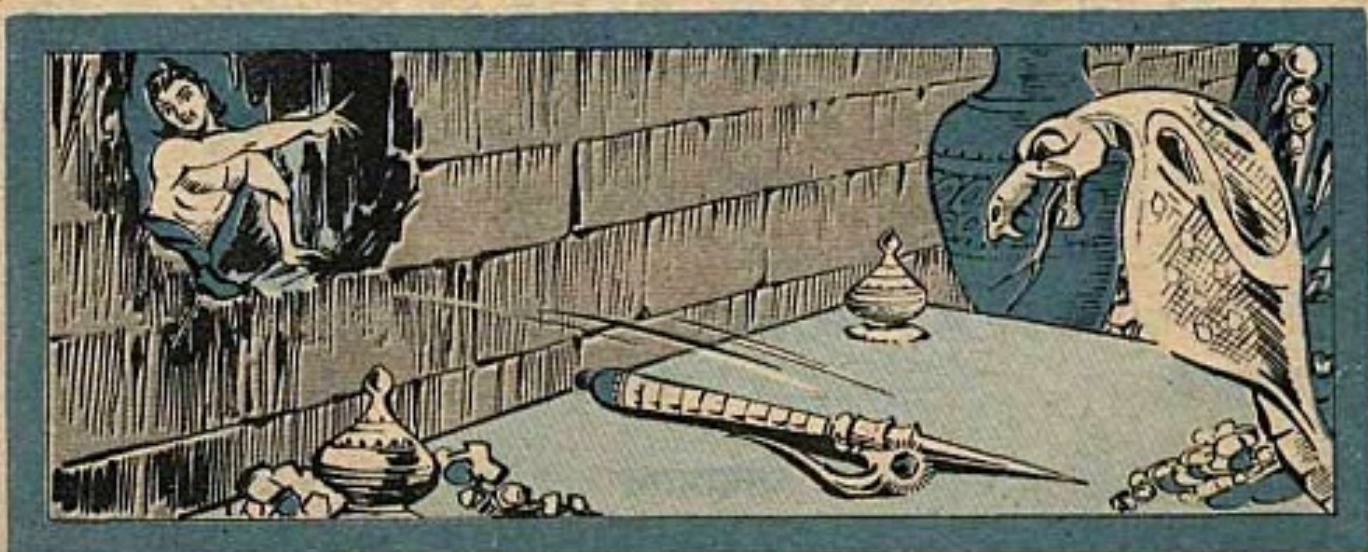
# ७९. विचित्र पर्वत की पंक्तियाँ

आस्ट्रेलिया के बीच में, मकर रेखा पर मकडोनेल नामक जो पर्वत की पंक्तियाँ हैं; वे बड़ी ही विचित्र हैं। ये पंक्तियाँ खूब घिस गयी हैं। इन की लंबाई १५० मील है।

Photo by Prasad
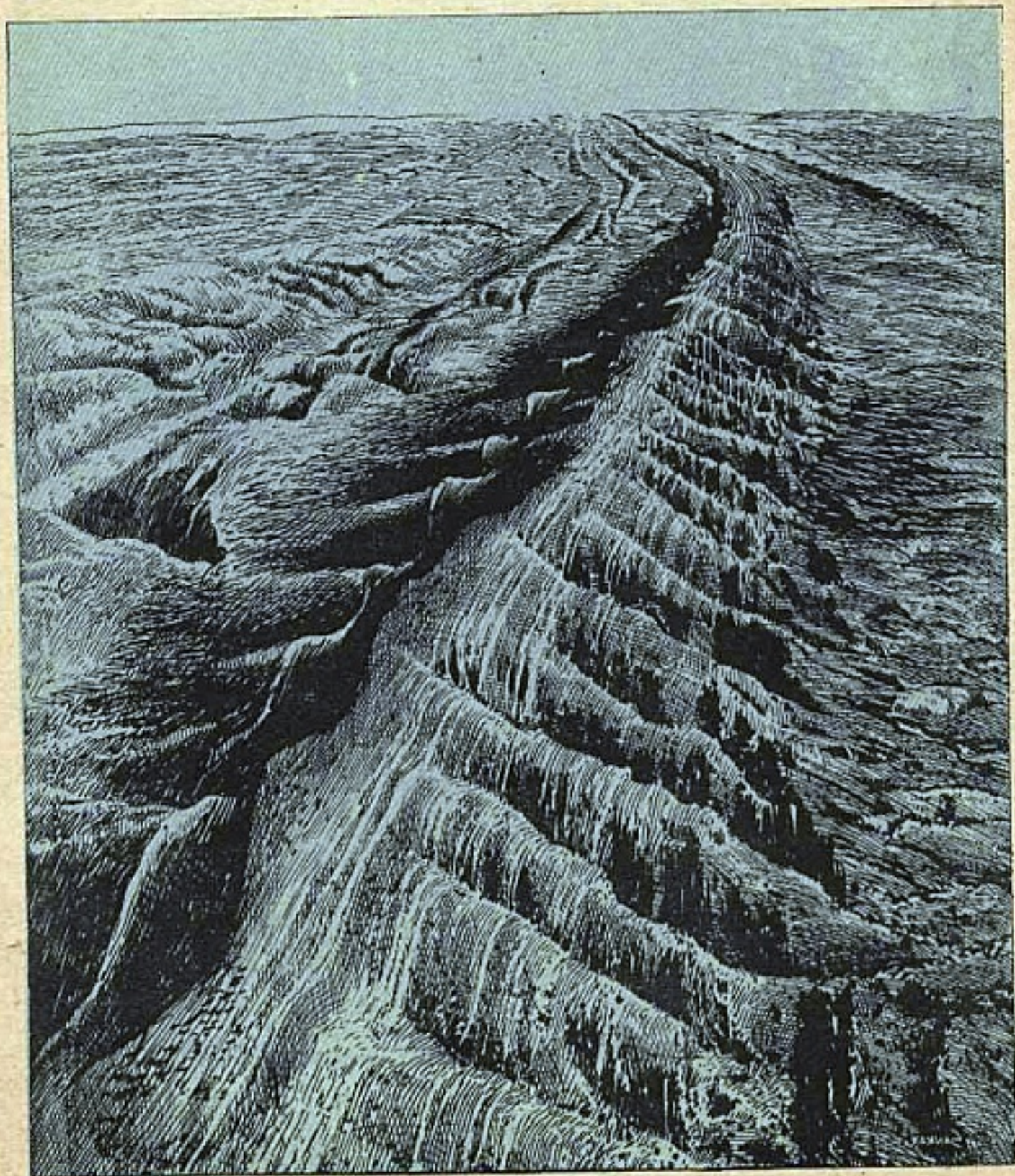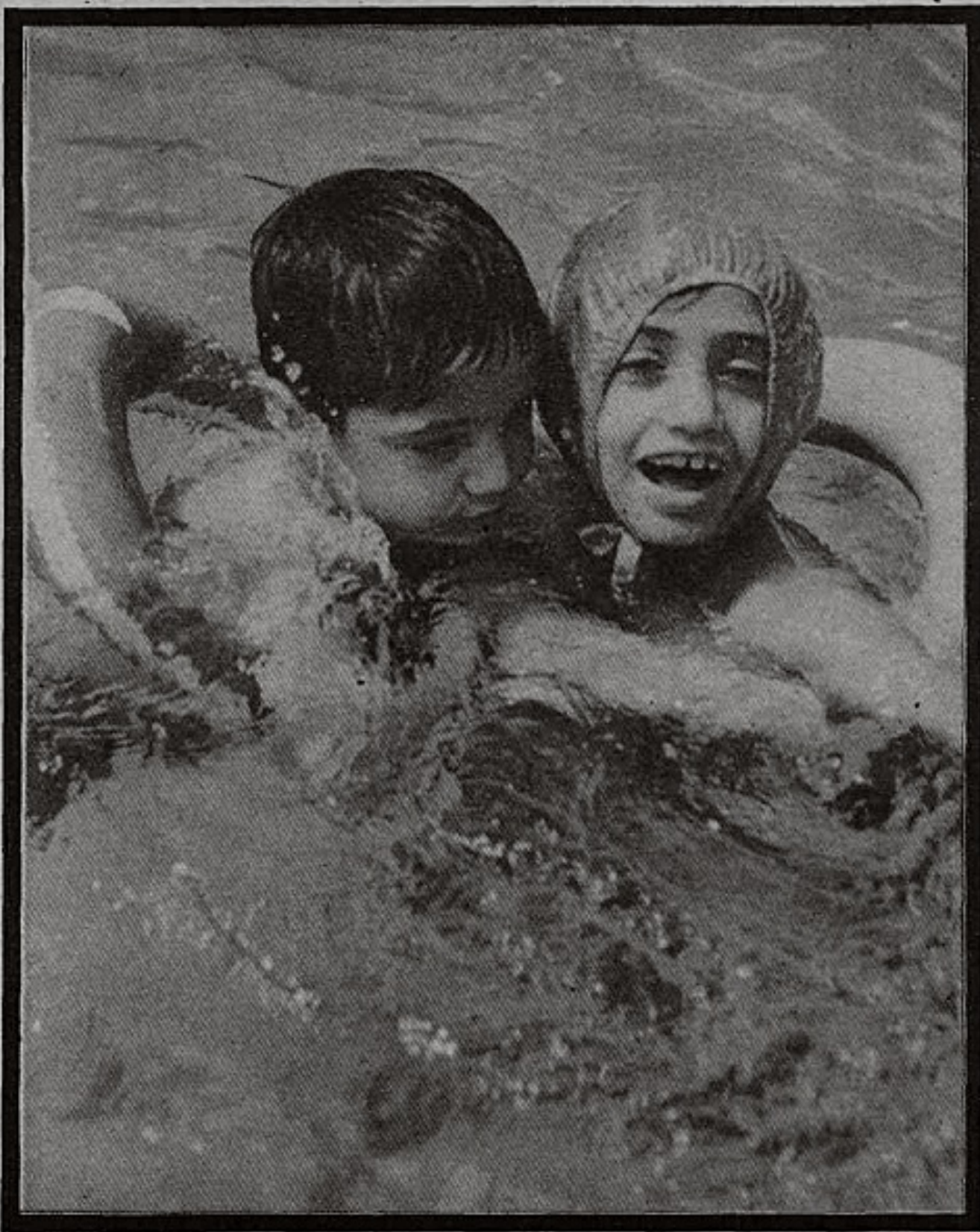
पुरस्कृत परिचयोक्ति

**जल की दुनिया हमें सुहाती !**

प्रेषक : इसरार महम्मद-उज्जैन

Photo by Bhalchandra Kadne

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

लहरें अपने पास बुलातीं !!

प्रेषक :
इसरार महम्मद-उज्जैन

# फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

सितम्बर १९६८ :: पारितोषिक १०)
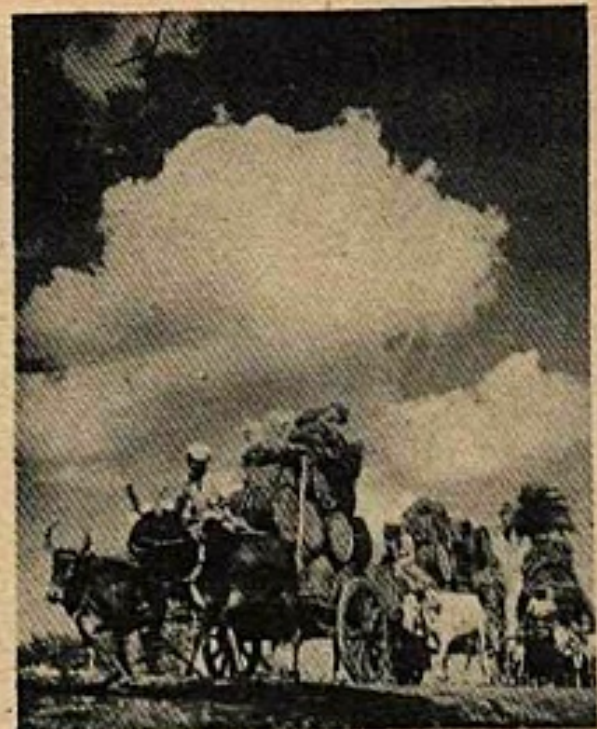
## कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख़ ७ जुलाई १९६८ के अन्दर भेजनी चाहिए।

**फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता**
**चन्दामामा प्रकाशन,**
**वड़पलनी, मद्रास-२६**

## जुलाई – प्रतियोगिता – फल

जुलाई के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: जल की दुनिया हमें सुहाती !
दूसरा फ़ोटो: लहरें अपने पास बुलातीं !!

प्रेषक: इसरार महम्मद,
ई/४२८, आनन्द भवन के सामने, माधव नगर, उज्जैन (म.प्र)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

75